वैज्ञानिक चिंतन की आवाज़

तर्कशील पथ

TARKSHEEL PATH

सितंबर - अक्तूबर 2024
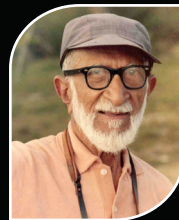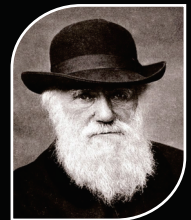
उस ज्ञान का कोई लाभ नहीं, जिससे हम काम नही लेते - चैख़ोव

आप धीरे-धीरे मरने लगते हैं

आप धीरे-धीरे मरने लगते हैं,
अगर आप करते नहीं कोई यात्रा,
पढ़ते नहीं कोई किताब,
सुनते नहीं जीवन की ध्वनियाँ,
करते नहीं किसी की तारीफ़।

आप धीरे-धीरे मरने लगते हैं,
जब आप मार डालते हैं अपना स्वाभिमान,
नहीं करने देते मदद अपनी और न ही करते हैं मदद दूसरों की।

आप धीरे-धीरे मरने लगते हैं,
अगर आप बन जाते हैं गुलाम अपनी आदतों के,
चलते हैं रोज़ उन्हीं रोज़ वाले रास्तों पे,
नहीं बदलते हैं अपना दैनिक नियम व्यवहार,
नहीं पहनते हैं अलग-अलग रंग,
या आप नहीं बात करते उनसे जो हैं अजनबी अनजान।

आप धीरे-धीरे मरने लगते हैं,
अगर आप नहीं महसूस करना चाहते आवेगों को,
और उनसे जुड़ी अशांत भावनाओं को,
वे जिनसे नम होती हों आपकी आँखें,
और करती हों तेज़ आपकी धड़कनों को।

आप धीरे-धीरे मरने लगते हैं,
अगर आप नहीं बदल सकते हों अपनी ज़िंदगी को,
जब हों आप असंतुष्ट अपने काम और परिणाम से,
अगर आप अनिश्चित के लिए नहीं छोड़ सकते हों निश्चित को,
अगर आप नहीं करते हों पीछा किसी स्वप्न का,
अगर आप नहीं देते हों इजाज़त खुद को,
अपने जीवन में कम से कम एक बार,
किसी समझदार सलाह से दूर भाग जाने की..

तब आप धीरे-धीरे मरने लगते हैं..!!

-- मार्था मेड्रिडोस

पत्रिका शुल्क :-
वार्षिक : 150/- रू.
विदेश : वार्षिक : 40 यू.एस.डॉलर
रचनाएं, पत्र व्यवहार व शुल्क भेजने के लिए पता:
मुख्य कार्यालय
तर्कशील भवन, संघेडा बाईपास
तर्कशील चौंक, बरनाला-148101
01679-241466, 98769 53561
tarkshiloffice@gmail.com
पत्रिका को पढ़ने के लिए लॉग ऑन करें:
www.tarksheel.org
Tarksheel Mobile App :
Readwhere.com

राजेन्द्र भदौड़, प्रकाशक,मुद्रक,स्वामी की तरफ से तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि.) द्वारा अप्पू आर्ट प्रैस, शाहकोट (जलन्धर) से मुद्रित करके मुख्य कार्यालय तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि.), बरनाला, (पंजाब) से तर्कशील सोसायटी पंजाब व हरियाणा के माध्यम से वितरण के लिए जारी किया।

तर्कशील पथ पत्रिका हेतु शुल्क
पंजाब नैशनल बैंक में
तर्कशील सोसायटी पंजाब (रजि.) के नाम से
खाता सं. 0044000100282234
IFSC: PUNB0004400 में जमा करा सकते है।
एंव पत्रिका भेजने के लिए एड्रेस व शुल्क की स्क्रीन शॉट/रसीद मोबाइल नम्बर
+91 98156 70725 पर वट्सएप कर दें।

इस अंक में

आनलाईन पत्रिका को पढ़ने के लिए:
www.tarksheel.org,
http://tarksheelblog.wordpress.com
Tarksheel on Mobile App:
Readwhere.com

संपादकीय

प्रगतिशील साहित्य ने हमेशा लोकप्रिय सामाजिक परिवर्तन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इतिहासकारों के अनुसार ''कलम की ताकत बंदूक से कहीं अधिक शक्तिशाली होती है।'' साहित्य में मात्र यथार्थवादी चित्रण का तब तक कोई अर्थ नहीं है जब तक वह समाज को कोई सकारात्मक दिशा न दे सके। पंजाबी के प्रसिद्ध कथाकार सुजान सिंह की कहानी ''कुल्फी'' का कोई महत्व न होता यदि कथाकार अपने हक के रूप में साधन संपन्न घरों के बच्चों से एक श्रमिक के बच्चे को अपनी ताकत से कुल्फी छीनते हुए उसकी माँ जब थपड़ दिखाती है तो उस के पिता द्वारा यह शब्द न कहलाता: ''मत मार इसे, बल्कि खुशी से कुछ बांट। एक डरपोक पिता के यहां एक बहादुर बालक का जन्म हुआ है।'' साहित्य का उद्देश्य में हिंदी के प्रसिद्ध लोक कथाकार मुंशी प्रेम चंद कहते हैं...''जब तक साहित्य का काम केवल कल्पना करना, लोरी की सामग्री इकट्ठा करना है, आंसू बहाकर मन को हल्का करना है तब तक वो 'दीवाना' है जिसका गम दूसरे खाते हैं। हम साहित्य को मात्र मन-प्रचाव की वस्तु नहीं कह सकते। केवल वही साहित्य ही हमारी कसौटी पर खरा उतरेगा जिसमें उच्च स्तर की सोच हो, स्वतंत्रता की भावना हो, सौंदर्य का सार हो, रचनात्मक शक्ति हो, जीवन की सच्चाइयों का प्रकाश हो, जो हमें आंदोलित करे और हमें सोने न दे। इसी लिए शहीद भगत सिंह भी कहते हैं कि कोई समाज वास्तव में उसी दिशा में जा रहा होता है जिस दिशा में उस समाज का साहित्य जा रहा होता है। वैज्ञानिक समझ से रहित साहित्य किसी समाज का कुछ नहीं संवार सकता। इतिहास गवाह है कि किसी समाज को नियंत्रित करने के लिए उत्पीड़क सबसे पहले उसके लेखन, साहित्य और वैज्ञानिक सोच को नियंत्रित करते हैं। फासीवाद के इस दौर में आज भारत में कलम पर, इतिहास पर, विज्ञान पर, लोक साहित्य पर बहुत बड़ा हमला हो रहा है। धारा 295 की धार ओर तेज की जा रही है। आज भारत के कितने ही बुद्धिजीवी जेलों में बंद हैं। शासक इतिहास को 'पुन: लिखने' की बात कर रहे हैं। पुनर्लेखन का अर्थ-इतिहास के भीतर की वैज्ञानिक समझ को ख़त्म करना है। ये हमले जहां बहुत कुछ रोकते हैं, वहीं उससे कहीं अधिक पैदा भी करते हैं। रूस के अवार भाषा के प्रसिद्ध लेखक रसूल हमजातोव ने कहा- ''यदि आप अतीत पर गोली चलाएंगे, तो भविष्य आपको तोप से उड़ा देगा।'' उत्पीड़कों को हमेशा मुंह की खानी पड़ी है। यदि उत्पीड़क साहित्य/इतिहास/विज्ञान के महत्व को पहचान कर उन पर हमले तेज़ कर रहे हैं तो हमें भी इस महत्व को समझना चाहिए और प्रगतिशील साहित्य को घर-घर तक पहुँचाने का अहिद करना चाहिए। यह रोशनी अंधेरे को चीरकर नए सूरज को सामने लाएगी। आइए समाज को अध्ययन, विचार से जोड़ने के लिए घर-घर साहित्य का प्रकाश फैलाएं!

प्लूटो की नीली रोशनी और नदी का रहस्य

सिमरन

चंदा मामा वाली लोरी तो तुम सब ने सुनी होगी और ट्विंकिल ट्विंकिल लिटिल स्टार वाली कविता भी स्कूल में पढ़ी ही होगी। रात को जब तुम आसमान में अपने इन्हीं जाने पहचाने दोस्तों चाँद और सितारों को देखते होगे तो उनके साथ साथ तुम तक कई लाइट ईयर (प्रकाश वर्ष) दूर मौजूद तारों और ग्रहों से प्रतिबिम्बित होकर आती तारों की रोशनी भी पहुँचती हैं। लाइट ईयर (प्रकाश वर्ष) के बारे में तो तुम जानते ही होगे। जैसे धरती पर दूरी मापने के लिए मीटर और किलोमीटर की इकाई होती है ठीक वैसे ही अन्तरिक्ष में दूरी नापने के लिए लाइट ईयर नाम की खगोलीय इकाई का इस्तेमाल किया जाता है, पता है न तुम्हें कि एक लाइट ईयर में कितने किलोमीटर होते हैं? एक लाइट ईयर में 10^{12} किलोमीटर आते है, मतलब 10 को 10 से बारह बार गुणा करके जो संख्या आती है उतने किलोमीटर। एक ग्रह से दूसरे ग्रह की दूरी कई लाइट ईयर्स (प्रकाश वर्ष) होती है। मतलब यह कि हमारे सौर मंडल में एक ग्रह दूसरे से बहुत दूर अन्तरिक्ष में अपनी अपनी कक्षाओं में सूरज के चारों ओर चक्कर काटते रहते हैं। ज्यादातर तारे पृथ्वी से ग्रहों के मुकाबले ज्यादा दूर हैं मगर चूंकि तारों में उनके अंदर हो रही नाभिकीय क्रियाओं की वजह से लगातार तेज रोशनी की किरणें निकलती रहती हैं इसीलिए उनकी रोशनी जब हम तक पहुँचती है तो पृथ्वी के वातावरण की वजह से वे मुड़ी हुई महसूस होती हैं जिसके कारण हमें तारे टिमटिमाते हुए दिखते हैं। हम इन तारों और ग्रहों को टेलिस्कोप नामक एक वैज्ञानिक यंत्र से ओर भी अच्छी तरह से देख सकते है, ठीक वैसे ही जैसे हम दूरबीन से दूर की वस्तुओं को ओर साफ देख पाते हैं। हमारे सौर मंडल में आठ ग्रह है– बुध (मर्कयुरी), शुक्र (वीनस), पृथ्वी (अर्थ), मंगल (मार्स), बृहस्पति (जुपिटर), शनि (सैटर्न), यूरेनस, नेपच्यून। मंगल ग्रह को हम पृथ्वी से टेलिस्कोप के ज़रिये देख सकते है, गहरे नारंगी लाल रंग का यह ग्रह बेहद शानदार दिखता है। ऐसे ही शनि के इर्द गिर्द अलग अलग गैसों से बनी रिंग्स या छल्ले हैं। ब्रह्माण्ड के न जाने कितने रहस्य समेटे है हमारी आकाशगंगा।

जिस तारक–पुंज (गैलेक्सी) में हमारा यह 8 ग्रहों से बना सौर मंडल है उसे आकाशगंगा (मिल्की वे) कहते हैं।

2006 तक सौर मंडल में 9 गृह थे और इसी नौवें ग्रह के बारे में हम यहां बात करेंगे। इस ग्रह का नाम है प्लूटो। 2005 में इरिस नाम की एक खगोलिय वस्तु के कुइपर बेल्ट, जिस बेल्ट में प्लूटो भी है, के पाये जाने के बाद, वैज्ञानिकों में यह बहस छिड़ गई कि किस खगोलिय पिंड को ग्रह कहा जाए और किसे नहीं। साल 2006 में अन्तरराष्ट्रीय खगोलिय संघ (इंटरनेशनल एस्ट्रोनॉमिकल यूनियन) ने प्लूटो को ड्वार्फ प्लेनेट (बौना ग्रह) का दर्जा दिया था। ड्वार्फ प्लेनेट दूसरे ग्रहों के मुकाबले छोटे होते हैं और अपने रास्ते में आने वाली वस्तुओं को हटाने में अक्षम होते हैं। अभी हाल ही में अमेरिका की राष्ट्रीय वैमानिकी और अन्तरिक्ष प्रबंधन, नासा के द्वारा 2006 में अन्तरिक्ष में भेजा गया न्यू होराइजन नाम का अन्तरिक्ष यान प्लूटो के करीब पहुँच कर प्लूटो की तस्वीरें लेने में सफल रहा है। प्लूटो पृथ्वी से 750 करोड़ प्रकाश वर्ष दूर है और
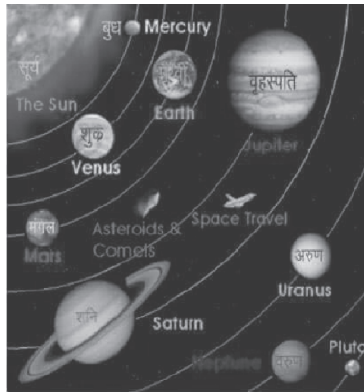
प्लूटो तक इस यात्रा में न्यू होराइजन को 9 साल लगे। न्यू होराइजन से पहले कोई भी अन्तरिक्ष यान प्लूटो के इतने करीब नहीं पहुँचा। न्यू होराइजन द्वारा भेजी गयी तस्वीरों ने प्लूटो की भूगर्भिक विविधताओं के बारे कई नई जानकारियां जोड़ दी हैं। न्यू होराइजन द्वारा भेजी गई तस्वीरों से प्लूटो की सतह से निकल रही नीली रोशनी, प्लूटो पर बह रही नदी, ऊंचे पहाड़ों और समतल मैदानों जैसे रहस्यों का खुलासा किया हैं। यह नीली रोशनी का गोला किस चीज का है और प्लूटो पर बहती नदी किस चीज से बनी है, इन बातों का जवाब खोजने से पहले आओ प्लूटो के बारे में थोड़ा और जान लें। प्लूटो चन्द्रमा से आकार में कुछ ही छोटा है। प्लूटो के वातावरण का दाब पृथ्वी के वातावरण से 10,000 गुना कम है, प्लूटो का वातावरण मूलतः नाइट्रोजन, मीथेन और कार्बन मोनोऑक्साइड से बना है। प्लूटो पर सामान्य तापमान शून्य से 400 डिग्री नीचे रहता है। ऐसे में प्लूटो एक बेहद ठंडा ग्रह है, शून्य तापमान पर तो पृथ्वी पर पानी बर्फ में बदल जाता है। प्लूटो को सूरज का एक

चक्कर लगाने में 248 दिन लगते हैं और पृथ्वी के हिसाब से प्लूटो पर एक दिन पृथ्वी के 6.5 दिनों के बराबर है! सोचो अगर पृथ्वी पर भी दिन इतने लम्बे होते तो तुम लोग कितना खेल पाते? स्कूल का समय भी तो लम्बा हो जाता। मगर सूरज से इतनी दूरी होने के कारण, बर्फीली ठण्ड होने से और ऑक्सीजन, पानी के न होने की वजह से प्लूटो या किसी ओर ग्रह पर जीवन संभव नहीं है। इसीलिए हमारी पृथ्वी इतनी खास है। खैर पृथ्वी के बारे में फिर कभी बात करेंगे। अभी वापिस प्लूटो चलते हैं।

प्लूटो पर गुरुत्व बल पृथ्वी के मुकाबले 1/15 है यानी अगर कोई व्यक्ति पृथ्वी पर 150 किलो का है तो उसका वजन प्लूटो पर केवल 10 किलो होगा। अच्छा एक ओर मजेदार बात बताऊँ, प्लूटो के पास अपने 5 उपग्रह हैं जो उसके चारों ओर चक्कर लगाते रहते हैं। जैसे चाँद पृथ्वी का उपग्रह है वैसे ही शायरन, करबरोस, स्टिक्स, निक्स और हइड्रा प्लूटो के उपग्रह हैं। अब वापिस न्यू होराइजन द्वारा खींची गई तस्वीरों से मिली जानकारी और उससे जुड़े सवालों पर चलते हैं। न्यू होराइजन द्वारा भेजी गई एक तस्वीर में प्लूटो की सतह से निकलती नीली रोशनी दिखाई देती है, जानते हो यह नीली रोशनी कैसे निकलती है। जब मीथेन और नाइट्रोजन सूर्य की अल्ट्रा वायलट किरणों के साथ मिलती हैं तो रासायनिक क्रियाएं होती हैं जिससे नीली रोशनी निकलती है। अभी थोड़ी देर पहले हमने जाना था कि प्लूटो पर नाइट्रोजन मौजूद है, पृथ्वी की तरह प्लूटो पर भी नाइट्रोजन भारी मात्रा में मौजूद है। जहाँ पृथ्वी पर 78% नाइट्रोजन है वहां प्लूटो पर 98% नाइट्रोजन है। और यही नाइट्रोजन जब मीथेन के साथ मिलकर प्लूटो के वातावरण से बाहर निकलता है तो इस प्रक्रिया में सूरज की किरणों के संपर्क में आने पर यह एक शानदार नीली रोशनी का गोला बनता है। प्लूटो की सतह से यह नाइट्रोजन हर दिन हजारों टन की मात्रा में रिस रही है। ऐसे में एक सवाल पैदा होता है कि प्लूटो पर इतनी नाइट्रोजन आ कहाँ से रही है। प्लूटो पर शोध कर रहे वैज्ञानिकों के मुताबिक उल्का पिंडो (अन्तरिक्ष में फैले खगोलिय पिंड) के प्लूटो से टकराने से जो दरारें पैदा होती हैं उनसे प्लूटो के कोर में मौजूद नाइट्रोजन रिस कर सतह तक पहुंच रही है। इसके साथ न्यू होराइजन ने ऐसी तस्वीरें भेजी है जिनमे प्लूटो पर 3000 मीटर ऊंचे पहाड़ और बहती नदियों के बारे में पता चला हैं। मगर जब प्लूटो पर पानी ही नहीं है तो यह नदी किस चीज की है? यह नदी है जमी हुई नाइट्रोजन बर्फ की। जैसे पहाड़ों में हिमस्खलन के दौरान पानी से बनी बर्फ बहती हुई प्रतीत होती है वैसे ही प्लूटो पर जमी हुई नाइट्रोजन से बनी बर्फ भी तस्वीरों में बहती हुई प्रतीत हो रही है, प्लूटो पर मौजूद पहाड़ भी इसी जमी हुई नाइट्रोजन के हैं। क्या तुम्हारे मन में यह सवाल नहीं उठा कि एक तरफ तो नाइट्रोजन प्लूटो की सतह से गैस की तरह रिस रही है तो दूसरी ओर बर्फ जैसी जमी हुई भी है। ऐसा इसलिए है क्योंकि प्लूटो के केंद्र में हो रही नाभिकीय क्रियाओं की ऊर्जा से जो गर्मी पैदा होती है उससे सतह पर मौजूद जमी हुई नाइट्रोजन को रिस कर प्लूटो के वातावरण की पकड़ से अलग होने में मदद मिलती हैं और प्लूटो के कोर से निकलने वाली नाइट्रोजन जमी हुई नाइट्रोजन की रिसने वाली मात्रा की भरपाई करती है। एक ओर बेहद मज़ेदार तस्वीर में प्लूटो पर दिल जैसी आकृति दिखाई देती है जो बाकी ग्रह से हलके रंग में है, इस हिस्से को टॉमबॉघ रीजन कहते है, क्लाइड टॉमबॉघ ने ही प्लूटो को खोजा था उनके नाम पर इस दिलनुमा आकृति का नाम रखा गया है। यह हिस्सा बाकी ग्रह से अलग इसीलिए दिखता है क्योंकि इस जगह कार्बन डाइऑक्साइड से बनी बर्फ है। 14 जुलाई 2015 को न्यू होराइजन प्लूटो के पास से गुजरता हुआ निकला और अभी तक इस अन्तरिक्ष यान द्वारा खींची गई सारी तस्वीरें पृथ्वी तक नहीं पहुंची हैं। आने वाले कुछ समय में जब ओर डेटा वैज्ञानिकों तक पहुंच जाएगा तब हम प्लूटो के बारे में ओर भी ज्यादा जानकारी हासिल कर पाएंगे। **(स्रोतः बाल-पत्रिका 'कोंपल')**

मथुरा में मंदिर के 1.9 करोड़ रुपये लेकर भागा पुजारी

एनबीटी न्यूज, मथुरा : गोवर्धन स्थिति प्रमुख मानसीगंगा मुकुट मुखारविंद मंदिर में सेवा भेंट से जुटाए गए 1 करोड़ 9 लाख की नकदी को बैंक में जमा कराने के नाम पर सेवायत द्वारा लेकर फरार हो जाने का मामला सामने आया है। इस मामले में मन्दिर रिसीवर कमेटी के प्रबंधक ने आरोपी सेवायत के खिलाफ थाना गोवर्धन में रिपोर्ट दर्ज कराई है। 29 जुलाई को दिनेश चंद मंदिर में दान के 1 करोड़ 9 लाख 37 हजार 200 रुपये लेकर गोवर्धन स्थित यूनियन बैंक ऑफ इंडिया की शाखा में जमा कराने के लिए गया था पर बैंक पहुंचने से पहले ही वह रकम लेकर फरार हो गया। **(01-08-2024)**

अछूत का सवाल

– शहीद भगत सिंह

बड़े यतन से बनाई गई एक भावुक नौजवान की छवि के पीछे एक अध्ययनशील विचारक, सामाजिक समस्याओं पर जम कर कलम चलाने वाला लेखक और 1928 में अमृतसर से निकलने वाली पत्रिका ''कीर्ती'' के संपादक मंडल का सदस्य कहीं खो गया है ! एक मुड़ा हुआ पन्ना बन कर रह गया है उसका व्यक्तित्व, जिसे फांसी पर चढ़ने से पहले उसने बडी सावधानी से मोड़ दिया था, लेकिन जिसे कभी पढ़ा ही नहीं गया, अमल में लाना तो बहुत दूर की बात है !

उसके इंकलाब की भावना के पीछे एक मजबूत वैचारिक आधार भी है इसका सबूत तो असेंबली में नकली बम से धमाका कर अपनी बात आम लोगों तक पहुंचाने की उसकी योजना से ही मिल गया था। उनकी सामाजिक- राजनीतिक समस्याओं पर गहरी पकड़ भी थी, इसके बारे में बहुत कम लोगों को जानकारी है।

तभी न, उसके बार बार कहने पर कि वह एक नास्तिक है, उसे जातीय, धार्मिक और भगवा रंग में रंगने की हर मुमकिन कोशिश की गई है!

– संपादक

काकीनाडा में 1923 में कांग्रेस-अधिवेशन में जिन्ना ने अपने अध्यक्षीय भाषण में आज की अनुसूचित जातियों को, हिन्दू और मुस्लिम मिशनरी संस्थाओं में बांट देने का सुझाव दिया था। हिंदू और मुस्लिम अमीर लोग, इस वर्गभेद को पक्का करने के लिए पैसा देने को भी तैयार थे। उसी के जवाब में लिखा गया था यह लेख, जो 1928 में कीर्ती में प्रकाशित हुआ! पेश है शहीद भगत सिंह का ऐतिहासिक दस्तावेज:

हमारे देश जैसे बुरे हालात किसी दूसरे देश के नहीं हुए..यहां अजब-अजब सवाल उठते रहते हैं। एक अहम सवाल अछूत-समस्या है।

समस्या यह है कि 30 करोड़ की जनसंख्या वाले देश में, जो 6 करोड़ लोग अछूत कहलाते हैं, उनके स्पर्श मात्र से धर्म भ्रष्ट हो जाएगा! उनके मन्दिरों में प्रवेश से देवगण नाराज हो उठेंगे! कुएं से उनके द्वारा पानी निकालने से कुआं अपवित्र हो जाएगा!

ये सवाल बीसवीं सदी में किए जा रहे हैं, जिन्हें कि सुनते ही शर्म आती है।

हमारा देश बहुत अध्यात्मवादी है, लेकिन हम मनुष्य को मनुष्य का दर्जा देते हुए भी झिझकते हैं, जबकि पूर्णतया भौतिकवादी कहलाने वाला यूरोप, कई सदियों से इन्कलाब की आवाज उठा रहा है। उन्होंने अमेरिका और फ्रांस की क्रांतियों के दौरान ही समानता की घोषणा कर दी थी।

आज रूस ने भी हर प्रकार का भेदभाव मिटा कर क्रांति के लिए कमर कसी हुई है। हम सदा ही आत्मा-परमात्मा के वजूद को लेकर चिन्तित होने तथा इस जोरदार बहस में उलझे हुए हैं कि क्या अछूत को जनेऊ दे दिया जाएगा? वे वेद-शास्त्र पढ़ने के अधिकारी हैं अथवा नहीं?

हम उलाहना देते हैं कि हमारे साथ विदेशों में अच्छा सलूक नहीं होता। अंग्रेजी शासन हमें अंग्रेजों के समान नहीं समझता, लेकिन क्या हमें यह शिकायत करने का अधिकार है?

सिंध के एक मुस्लिम सज्जन नूर मुहम्मद, जो बम्बई कौंसिल (Council) के सदस्य हैं, इस विषय पर 1926 में खूब कहा-

वे कहते हैं ''जब तुम एक इन्सान को पीने के लिए पानी देने से भी इन्कार करते हो, जब तुम उन्हें स्कूल में भी पढ़ने नहीं देते, तो तुम्हें क्या अधिकार है कि अपने लिए अधिक अधिकारों की मांग करो? जब तुम एक इन्सान को समान अधिकार देने से भी इन्कार करते हो तो तुम अधिक राजनीतिक अधिकार मांगने के अधिकारी कैसे बन गए?''

बात बिल्कुल खरी है। लेकिन क्योंकि यह बात एक मुस्लिम ने कही है इसलिए हिन्दू कहेंगे कि देखो, वह उन अछूतों को मुसलमान बना कर अपने में शामिल करना चाहते हैं!

जब तुम उन्हें इस तरह पशुओं से भी गया-बीता समझोगे तो वह जरूर ही दूसरे धर्मों में शामिल हो जाएंगे, जिनमें उन्हें अधिक अधिकार मिलेंगे, जहां उनसे इन्सानों-जैसा व्यवहार किया जाएगा। फिर यह कहना कि देखो जी, ईसाई और मुसलमान हिन्दू कौम को नुकसान पहुंचा रहे हैं, व्यर्थ होगा।

कितना स्पष्ट कथन है, लेकिन यह सुन कर सभी तिलमिला उठते हैं। ठीक इसी तरह की चिन्ता हिन्दुओं को भी हुई। सनातनी पण्डित भी कुछ-न-कुछ इस मसले पर सोचने लगे। बीच-बीच में बड़े 'युगांतरकारी' कहे जानेवाले भी शामिल हुए। पटना में हिन्दू महासभा का सम्मेलन लाला लाजपतराय- जो कि अछूतों के बहुत पुराने समर्थक चले आ रहे हैं- की अध्यक्षता में हुआ, तो जोरदार बहस छिड़ी। अच्छी नोंक-झोंक हुई। समस्या यह थी कि अछूतों को यज्ञोपवीत धारण करने का हक है अथवा नहीं? तथा क्या उन्हें वेद-शास्त्रों का अध्ययन करने का अधिकार है?

बड़े-बड़े समाज-सुधारक तमतमा गये, लेकिन लाला जी ने सबको सहमत कर दिया तथा यह दो बातें स्वीकृत कर, हिन्दू धर्म की लाज रख ली; वरना जरा सोचो, कितनी शर्म की बात होती !

कुत्ता हमारी गोद में बैठ सकता है। हमारी रसोई में नि:संग फिरता है, लेकिन एक इन्सान का हमसे स्पर्श हो जाए तो बस धर्म भ्रष्ट हो जाता है।

इस समय पंडित म. मो. मालवीय जी जैसे बड़े समाज-सुधारक, अछूतों के बड़े प्रेमी और न जाने क्या-क्या, पहले एक मेहतर के हाथों गले में हार डलवा लेते हैं, लेकिन कपड़ों सहित स्नान किये बिना, स्वयं को अशुद्ध समझते हैं! क्या खूब यह चाल है!

सबको प्यार करने वाले भगवान की पूजा करने के लिए मन्दिर बना है, लेकिन वहां अछूत जा घुसे, तो वह मन्दिर अपवित्र हो जाता है! भगवान रुष्ट हो जाता है!

घर की जब यह स्थिति हो तो बाहर हम बराबरी के नाम पर झगड़ते अच्छे लगते हैं क्या? तब हमारे इस रवैये में कृतघ्नता की भी हद पाई जाती है।

जो निम्नतम काम करके, हमारे लिए सुविधाओं को उपलब्ध कराते हैं, उन्हें ही हम दुरदुराते हैं। पशुओं की हम पूजा कर सकते हैं, लेकिन इन्सान को पास नहीं बिठा सकते!

आज इस सवाल पर बहुत शोर हो रहा है। उन विचारों पर आजकल विशेष ध्यान दिया जा रहा है। देश में मुक्ति कामना जिस तरह बढ़ रही है, उसमें साम्प्रदायिक भावना ने ओर कोई लाभ पहुंचाया हो अथवा नहीं, लेकिन एक लाभ जरूर पहुंचाया है -अधिक अधिकारों की मांग के लिए अपनी-अपनी कौमों की संख्या बढ़ाने की चिन्ता सबको हुई। मुस्लिमों ने जरा ज्यादा जोर दिया। उन्होंने अछूतों को मुसलमान बना कर अपने बराबर अधिकार देने शुरू कर दिए। इससे हिन्दुओं के अहम को चोट पहुंची। स्पर्धा बढ़ी, फसाद भी हुए।

धीरे-धीरे सिखों ने भी सोचा कि कहीं हम पीछे न रह जाएं! हिंदू-सिखों के बीच अछूतों के जनेऊ उतारने या केश कटवाने के सवालों पर झगड़े हुए। अब तीनों कौमें अछूतों को अपनी-अपनी ओर खींच रही है। इसका बहुत शोर-शराबा है।

उधर ईसाई चुपचाप उनका रुतबा बढ़ा रहे हैं; चलो, इस सारी हलचल से ही देश के 'दुर्भाग्य' की लानत तो दूर हो रही है!!

इधर जब अछूतों ने देखा कि उनकी वजह से इनमें फसाद हो रहे हैं तथा उन्हें हर कोई अपनी-अपनी खुराक समझ रहा है तो (उन्होंने सोचा) वे अलग ही क्यों न संगठित हो जाएं?

इस विचार के अमल में अंग्रेजी सरकार का कोई हाथ हो अथवा न हो, लेकिन इतना अवश्य है कि इस प्रचार में सरकारी मशीनरी का काफी हाथ था।

'आदि धर्म मण्डल' जैसे संगठन उस विचार के प्रचार का परिणाम हैं।

अब एक सवाल ओर उठता है कि इस समस्या का सही निदान क्या हो? इसका जबाब बड़ा अहम है।

सबसे पहले यह निर्णय कर लेना चाहिए कि सब इन्सान समान हैं तथा न तो जन्म से कोई भिन्न पैदा हुआ और न कार्य-विभाजन से। अर्थात् क्योंकि एक आदमी गरीब मेहतर के घर पैदा हो गया है, इसलिए जीवन भर मैला ही साफ करेगा और दुनिया में किसी तरह के विकास का काम पाने का उसे कोई हक नहीं है, ये बातें फिजूल हैं।

इस तरह हमारे पूर्वज आर्यों ने इनके साथ ऐसा अन्यायपूर्ण व्यवहार किया तथा उन्हें नीच कह कर दुत्कार दिया एवं निम्नकोटि के कार्य करवाने लगे। साथ ही यह भी चिन्ता हुई कि कहीं ये विद्रोह न कर दें, तब पुनर्जन्म के दर्शन का प्रचार कर दिया कि 'यह तुम्हारे पूर्व जन्म के पापों का फल है..'

अब क्या हो सकता है? चुपचाप दिन गुजारो!

इस तरह उन्हें धैर्य का उपदेश देकर वे लोग, उन्हें लम्बे समय तक के लिए शान्त करा गए, लेकिन उन्होंने बड़ा 'पाप' किया! मानव के भीतर की मानवीयता को समाप्त कर दिया। आत्मविश्वास एवं स्वावलम्बन की भावनाओं को समाप्त कर दिया। बहुत दमन और अन्याय किया गया। आज उस सबके प्रायश्चित का वक्त है।

इसके साथ एक दूसरी गड़बड़ी हो गयी। लोगों के मनों में आवश्यक कार्यों के प्रति घृणा पैदा हो गई। हमने जुलाहे को भी दुत्कारा। आज कपड़ा बुननेवाले भी अछूत समझे जाते हैं। यू.पी. की तरफ कहार को भी अछूत समझा जाता है। इससे बड़ी गड़बड़ी पैदा हुई। ऐसे में विकास की प्रक्रिया में रुकावटें पैदा हो रही हैं।

इन तबकों को अपने समक्ष रखते हुए हमें चाहिए कि हम न इन्हें अछूत कहें और न समझें। बस, समस्या हल हो जाती है।

नौजवान भारत सभा तथा नौजवान कांग्रेस ने जो ढंग अपनाया है, वह काफी अच्छा है। जिन्हें आज तक अछूत कहा जाता रहा, उनसे अपने इन 'पापों' के लिए क्षमायाचना करनी चाहिए तथा उन्हें अपने जैसा इन्सान समझना, बिना अमृत छकाए, बिना कलमा पढ़ाए या शुद्धि किए, उन्हें अपने में शामिल करके उनके हाथ से पानी पीना, यही उचित ढंग है। और आपस में खींचतान करना और व्यवहार में कोई भी हक न देना, कोई ठीक बात नहीं है।

जब गांवों में मजदूर-प्रचार शुरू हुआ, उस समय किसानों को सरकारी आदमी यह बात समझा कर भड़काते थे कि..'देखो, यह इन्हें सिर पर चढ़ा रहे हैं और तुम्हारा काम बंद करवाएंगे।'

बस किसान इतने में ही भड़क गए! उन्हें याद रहना चाहिए कि उनकी हालत तब तक नहीं सुधर सकती जब तक कि वे इन गरीबों को नीच और कमीन कह कर अपनी जूती के नीचे दबाए रखना चाहते हैं। अक्सर कहा जाता है कि वह साफ नहीं रहते। इसका उत्तर साफ है-क्योंकि वे गरीब हैं! गरीबी का इलाज करो। ऊँचे-ऊँचे कुलों के गरीब लोग भी कोई कम गन्दे नहीं रहते। गन्दे काम करने का बहाना भी नहीं चल सकता, क्योंकि माताएं बच्चों का मैला साफ करने से मेहतर तथा अछूत तो नहीं हो जातीं!

लेकिन यह काम उतने समय तक नहीं हो सकता, जितने समय तक कि अछूत कौमें अपने आपको संगठित न कर लें। हम तो समझते हैं कि उनका स्वयं को अलग संगठनबद्ध करना तथा मुस्लिमों के बराबर गिनती में होने के कारण उनके बराबर अधिकारों की मांग करना बहुत आशाजनक संकेत हैं। या तो साम्प्रदायिक भेद को झंझट ही खत्म करो, नहीं तो उनके अलग अधिकार उन्हें दे दो।

कौंसिलों और असेम्बलियों का कर्तव्य है कि वे स्कूल-कालेज, कुएं तथा सड़क के उपयोग की पूरी स्वतन्त्रता उन्हें दिलाएं। जबानी तौर पर ही नहीं, वरन साथ ले जाकर उन्हें कुओं पर चढ़ाएं। उनके बच्चों को स्कूलों में प्रवेश दिलाएं, लेकिन जिस लेजिस्लेटिव में बालविवाह के विरुद्ध पेश किए बिल तथा मजहब के बहाने हाय-तौबा मचाई जाती है, वहां वे अछूतों को अपने साथ शामिल करने का साहस कैसे कर सकते हैं?

इसलिए हम मानते हैं कि उनके अपने जन-प्रतिनिधि हों। वे अपने लिए अधिक अधिकार मांगें।

हम तो साफ कहते हैं कि 'उठो,अछूत कहलाने वाले असली जनसेवको तथा भाइयो! उठो! अपना इतिहास देखो। गुरु गोबिन्द सिंह की फौज की असली शक्ति तुम्हीं थे! शिवाजी तुम्हारे भरोसे पर ही सब कुछ कर सके, जिस कारण उनका नाम आज भी जिन्दा है। तुम्हारी कुर्बानियां स्वर्णाक्षरों में लिखी हुई हैं। तुम जो नित्यप्रति सेवा करके जनता के सुखों में बढ़ोतरी करके और जिन्दगी संभव बना कर यह बड़ा भारी अहसान कर रहे हो, उसे हम लोग नहीं समझते।'

लैण्ड-एलियेनेशन एक्ट के अनुसार, तुम धन एकत्र कर भी जमीन नहीं खरीद सकते। तुम पर इतना जुल्म हो रहा है कि मिस मेयो मनुष्यों से भी कम कहती हैं।

''उठो, अपनी शक्ति पहचानो। संगठनबद्ध हो जाओ। असल में स्वयं कोशिश किए बिना कुछ भी न मिल सकेगा।''

स्वतन्त्रता के लिए स्वाधीनता चाहने वालों को यत्न करना चाहिए।

इन्सान की धीरे-धीरे कुछ ऐसी आदतें हो गई हैं कि वह अपने लिए तो अधिक अधिकार चाहता है, लेकिन जो उनके मातहत हैं, उन्हें वह अपनी जूती के नीचे ही दबाए रखना चाहता है।

कहावत है- 'लातों के भूत बातों से नहीं मानते' अर्थात संगठनबद्ध हो अपने पैरों पर खड़े होकर पूरे समाज को चुनौती दे दो। तब देखना, कोई भी तुम्हें तुम्हारे अधिकार देने से इन्कार करने की जुर्रत न कर सकेगा। तुम दूसरों की खुराक मत बनो। दूसरों के मुंह की ओर न ताको। लेकिन ध्यान रहे, नौकरशाही के झांसे में मत फंसना। यह तुम्हारी कोई सहायता नहीं करना चाहती, बल्कि तुम्हें अपना मोहरा बनाना चाहती है।

यही पूंजीवादी नौकरशाही तुम्हारी गुलामी और गरीबी का असली कारण है; इसलिए तुम उसके साथ कभी न मिलना। उसकी चालों से बचना। तब सब कुछ ठीक हो जायेगा।

तुम ही असली सर्वहारा हो... **शेष पृष्ठ 7 पर**

9 सितंबर (पाश के जन्म दिन) पर विशेष:

पुरातन राज्य की ओर वापसी

– शहीद अवतार पाश

जिसे आप भारत की पुरानी संस्कृति कहते हैं, उससे जितनी जल्दी पीछा छुड़ा लें, उतना बेहतर है। केवल किताबों में अच्छा अच्छा कहने से कोई चीज अच्छी नहीं हो जाती। लेकिन जिस जाल में आप हजारों सालों से फंसे हुए हैं, वह अच्छा लगने लगता है। लोग कहते हैं कि भारत में सब कुछ अच्छा था, समाजवाद, सच्चाई और समृद्धि थी। वे गलतफहमी में हैं। पीछे की ओर लौटना मूर्खता है। पुरातन में भी सब कुछ सही नहीं था, जिसकी ओर लौटने की आवश्यकता हो। अगर कुछ अच्छा होता, तो हम उसे छोड़कर नहीं आते। अच्छी चीज़ को कोई नहीं छोड़ता। और अगर छोड़ता भी है, तो वह ओर बेहतर चीज़ की खोज में जाता है, लेकिन हम एक बड़ी गलतफहमी में हैं।

हम सोचते हैं कि भारत सोने की चिड़िया था। भारत कभी भी सोने की चिड़िया नहीं था। हां, कुछ लोगों के लिए था, और कुछ लोगों के लिए तो आज भी है, लेकिन सभी के लिए नहीं। हम सोचते हैं कि पुराने समय में घरों में ताले नहीं लगाए जाते थे। अच्छा राज था, अच्छे समय थे। मैं नहीं मानता कि यह सच हो सकता है। अगर सच होता तो कारण कुछ ओर होंगे। जो आम समझा जाता है, वह कारण नहीं हो सकता।

क्योंकि गौतम बुद्ध लोगों को समझा रहे थे कि चोरी मत करो। महावीर शिक्षा देते हैं कि चोरी मत करो। अगर लोग इतने अच्छे थे कि घरों को ताले की जरूरत नहीं थी, तो महावीर और बुद्ध चोरी न करने की शिक्षा क्यों दे रहे थे? चोरी होती होगी तभी चोरी न करने की बात समझा रहे थे कि चोरी मत करो? इसका मतलब यह है कि उस समय भी चोर थे।

सुक़रात ढाई हजार साल पहले यूनान में यही कहता रहा है कि बच्चे बिगड़ गए हैं। माता-पिता और शिक्षकों का कोई आदर नहीं रहा। लोग बेईमान और भ्रष्टाचारी हो गए हैं। चीन में एक छह हजार साल पुरानी किताब मिली है, उसका मुख्य भाग पढ़ें तो ऐसा लगता है जैसे आज के अखबार का संपादकीय लेख हो। उसमें लिखा है कि लोग बिगड़ गए हैं। नैतिकता का नाश हो गया है। लोग भौतिकवादी हो गए हैं। भ्रष्टाचार फैल गया है। कोई किसी की नहीं सुनता। ऐसा लगता है जैसे 'महाप्रलय' निकट आ गई है। छह हजार साल पुरानी किताब में भी लिखा है कि पुराने लोग अच्छे बुरे दोनों होते थे।

असल में यह एक सार्वभौमिक और स्थायी भ्रम है कि पहले के लोग अच्छे होते थे। असल में हम पुराने लोगों, आम जनता को भूल चुके हैं और कुछ विशेष लोग हमें याद रह गए हैं। उनकी वजह से ही यह सारी गड़बड़ होती है। महावीर और बुद्ध याद है, महावीर और बुद्ध के समय का आम आदमी याद नहीं। अगर उस समय सभी लोग अच्छे होते तो लोंगो को नैतिक बनने की शिक्षा नही देते।

मनुष्य का चित्त इतना परिपक्व और विकसित हो चुका है कि उसे पुरातन राज्य में नहीं ले जाया जा सकता। किसी आदिम समाज में नहीं ले जाया जा सकता। एक-दो दिन के लिए जंगल अच्छा लगेगा। पर दो-तीन दिन बाद उब जाएगा। मनुष्य आगे बढ़ता है। हां, पीछे मुड़कर एक-दो दिन के लिए अवकाश मनाया जा सकता है। मन में मौज आ जाएगी, राजघाट पर बैठकर चरखा कातिए जैसे नेता लोग कातते हैं-वह सही है, लेकिन अगर कोई कहे कि चरखा ही उद्योग का केंद्र बनाओ तो गलत है। कोई कहे कि चरखा ही चलाओ, यह खतरा है। कभी-कभी फोटो खिंचवाने के लिए चरखा कातना ठीक है। सस्ती शोहरत के लिए फायदेमंद है। लेकिन वास्तव में पीछे मुड़ना असंभव है। ना कोई भारतीय संस्कृति, ना मुस्लिम, ना ईसाई संस्कृति पीछे ले जाकर सुख दे सकती है। आगे और आगे-जहां सब जा रहे हैं, वहां न कोई हिंदू बचेगा न कोई सिख, न मुसलमान बचेगा न ईसाई। वहां सिर्फ आदमी बचेगा। भविष्य केवल इंसान का है,विज्ञान का है।

(''सियाड'' पंजाबी पत्रिका-माघ 1977 से अनुवादित)

-गुरमीत अम्बाला

पृष्ठ 6 का शेष संगठनबद्ध हो जाओ। तुम्हारी कुछ भी हानि न होगी, बस गुलामी की जंजीरें कट जाएंगी। उठो, और वर्तमान व्यवस्था के विरुद्ध बगावत खड़ी कर दो। धीरे-धीरे होने वाले सुधारों से कुछ नहीं बन सकेगा।

सामाजिक आन्दोलन से क्रांति पैदा कर दो तथा राजनीतिक और आर्थिक क्रांति के लिए, कमर कस लो। तुम ही तो देश का मुख्य आधार हो, वास्तविक शक्ति हो।

सोए हुए शेरो! उठो और बगावत खड़ी कर दो।

मंगल ग्रह

– **अभिषेक माथुर**

मंगल ग्रह हम पृथ्वीवासियों को एक लाल सितारे की तरह नज़र आता है किन्तु यह सितारा नहीं एक ग्रह है। दरअसल तारे और ग्रह में यह अन्तर है कि तारा खुद ही प्रकाश छोड़ता है और हमारी आँखों को वह स्थिर दिखायी पड़ता है। जबकि ग्रह सूरज के प्रकाश को ही परावर्तित करता है और भ्रमण करता दिखायी देता है। मंगल ग्रह सूर्य से दूरी के अनुसार चौथा ग्रह है। यह शुक्र के बाद पृथ्वी के सबसे समीप है। सैकड़ों वर्ष से हम इसे देख रहे हैं और इस पर जाने का प्रयास कर रहे हैं। अभी तक इसकी कक्षा में 'मैरिनर' और 'वाइकिंग' जैसे कई यान भेजे जा चुके हैं। हमारे तीन 'रोवर' यानी वे रोबोट जो किसी ग्रह की सतह पर चल सकते हैं, इसकी सतह पर उतर चुके हैं–'स्पिरिट', 'ओपॉरचुनिटी' तथा 'क्यूरिओसिटी'।
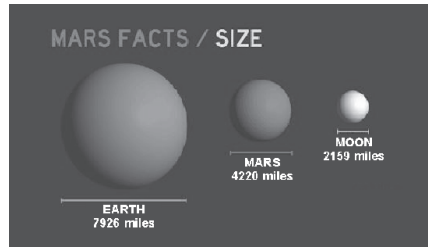
मंगल ग्रह की सतह कैलिफोर्निया के दक्षिणी पूर्वी और नेवादा के दक्षिणी इलाके के बीच फैले 'मोजावी' रेगिस्तान की तरह है। वहाँ के बड़े लाल पर्वत 'आयरन–ऑक्साइड' से भरे हुए हैं। मंगल पर लाल धूल की आँधी भी आती है, इसलिए यह दूर से लाल रंग का नज़र आता है। यह आँधी कुछ घण्टों के लिए नहीं अपितु हफ्तों और महीनों तक रहती है। यहाँ रात को 73 डिग्री सेल्सियस तक तापमान गिर जाता है। मंगल ग्रह एक ठण्डी, सूखी और उजाड़ जगह है, जिसमें 'ऑक्सीजन' की कमी है, इसलिए वह मनुष्यों के लिए असहनीय है। किन्तु ऐसा हमेशा से नहीं था। सैकड़ों वर्ष पहले, मंगल की सतह पर जल था। यह हमें इसलिए पता चला, क्योंकि पानी जब लगातार बहता है, तो सूखने के बाद भी वह ग्रह की सतह पर कुछ खास प्रकार के आकार वाले निशान छोड़ देता है और ये सब हमें मंगल पर दिखायी देते हैं। मंगल का भीतरी भाग पिघले लोहे का बना था जिससे एक चुम्बकीय क्षेत्र उत्पन्न होता था। इससे मंगल के ऊपर वायुमण्डल तथा एक रक्षात्मक क्षेत्र भी रहता था। किन्तु एक लम्बी अवधि में जब यह धीरे–धीरे ठण्डा होने लगा तो इसके भीतर का पिघला लोहा जम गया और इसने अपना चुम्बकीय क्षेत्र खो दिया। इसी वजह से मंगल ने अपना वायुमण्डल तथा रक्षात्मक क्षेत्र भी खो दिया।

मंगल ग्रह जब ठण्डा होने लगा था, तो उसके वायुमण्डल का दबाव भी घट रहा था। यह दबाव पृथ्वी के वायुमण्डल के दबाव का केवल एक प्रतिशत ही रह गया। इसलिए इसकी सतह पर अब जल भी नहीं रहा। किन्तु इसके ध्रुवीय शिखरों के नीचे कई टन बर्फ जमी हुई है। यह बर्फ वर्षों पहले मौजूद महासागर का अवशेष है। ध्रुवीय शिखरों की ऊपरी सतह पर 'कार्बन डाइऑक्साइड' की बर्फ जमी हुई है। 1964 में यान 'मैरीनर–4' मंगल की कक्षा में भेजा गया था। इस यान ने मंगल के कुछ चित्र हमें भेजे, जिसमें खगोलिय पिण्डों के टकराने से बने गढ़े यानी 'क्रेटर' प्रमुख तौर पर दिखायी दे रहे थे। 1971 में 'मैरीनर–9' यान मंगल पर भेजा गया, जिसने 'औलिम्पस मौन्स' ज्वालामुखी और 'मैरीनर' घाटी की तस्वीरें भेजी। 'औलिम्पस मौन्स' हमारे 'माउण्ट ऐवरेस्ट' पर्वत से तीन गुणा बड़ा है जबकि 'मैरीनर' घाटी की चौड़ाई पूरे अमेरिका की चौड़ाई जितनी है। 1976 में पहली बार एक यान मंगल पर उतरा जिसका नाम था 'वाइकिंग–लैण्डर'। इसके बाद एक अन्य यान 'वाइकिंग औरबिटर' ने मंगल ग्रह का एक ऐसा अनोखा चित्र खींचा जो आगे चलकर मंगल का सबसे मशहूर चित्र हो गया। वह था मंगल की सतह पर एक मनुष्य का चेहरा।

इस चेहरे को देखकर पृथ्वीवासी हैरान रह गये और कुछ तो यह भी सोचने लगे कि मंगल पर हमारी तरह की सभ्यता होगी। किन्तु बाद में पता चला कि यह चित्र कुछ पहाड़ों का था, जिस पर रोशनी कुछ इस प्रकार पड़ रही थी कि एक चेहरे की–सी छवि नज़र आ रही थी। इसी प्रकार एक ओर घटना घटित हुई। 1984 में एक अजीब–सा उल्कापिण्ड पृथ्वी पर गिरा जो कि हरे रंग का था। जब इसे 'इलेक्ट्रॉन' खुर्दुबीन द्वारा देखा गया तो पता चला कि यह मंगल ग्रह का हिस्सा था। इसमें एक जैविक आकार था जो कि एक कीड़े ('वर्म') की भाँति लग रहा था। यह 'बैक्टीरिया' हो सकता था। वैज्ञानिक एक बार फिर चौंके कि कहीं मंगल पर उन्होंने जीवाणु तो नहीं खोज लिये थे, लेकिन बाद में फिर इसकी वजह कुछ ओर पायी गयी। दरअसल वे आकार निर्जीव आँधी 'कार्बोनेट्स' (चूने) की वजह से बन रहे थे। मंगल **शेष पृष्ठ 11 पर**

डेरों/आश्रमों का मकड़जाल

सुमीत सिंह/गुरमीत अम्बाला

विगत वर्षों में देश भर में डेरों/आश्रमों का एक व्यापक आधार धीरे धीरे विकसित होता जा रहा है। और यह डेरे/आश्रम सभी परम्परा गत मजहबों के लोगों द्वारा किसी न किसी रूप में व नाम से बनाए जा रहे हैं,सभी धर्मों की बहुसंख्यक आबादी अपनी सामाजिक, मानसिक,आर्थिक आकांक्षाओं की पूर्ति के लिए इन डेरों/आश्रमों पर निर्भर होती जा रही है, ऐसी धारणा समाज मे फैलती जा रही कि कथित चमत्कारी बाबा उनकी प्रत्येक सांसारिक इच्छा को पूर्ण कर देंगे।

ज्यादातर बाबागीरी करने वाले अपने को चमत्कारित पुरुष होने का प्रचार करते हैं। जिनकी चमत्कारी शक्तियों से श्रद्धालुओं की सभी समस्याओं का समाधान करने का दावा किया जाता है। शारीरिक बीमारियों, घरेलू क्लेश, आर्थिक विपन्नता आदि सभी समस्याओं को हल करने के प्रचार किए जाते हैं। सरकारें और विपक्षी पार्टियां वोट की राजनीति के चलते कोई भी ऐसा बयान नही देती जिससे उनकी वोटों पर फर्क पड़े। न ही कोई कार्यवाही ऐसे चमत्कारी बाबाओं के विरुद्ध करने की मांग करती हैं। कभी कभी जनता में से ही कोई पीड़त हौंसला करता है और अपनी जान को जोखिम में डाल ऐसे मामलों को कोर्ट तक ले जाता है कि बाबागीरी करने वालों को सजा हो पाती है।

जब अचानक कोई बड़ी दु:खद मानवीय त्रासदी घटित होती है तो इन डेरों/आश्रमो की कार्य प्रणाली पर बहुत ही हल्के स्तर पर चर्चा कुछ दिन होती है और फिर सब कुछ भुला कर ढर्रे की जिंदगी चलने लगती है। ज्यादातर मीडिया, राजनेता और प्रशासन के अधिकारी बाबा के खिलाफ कार्यवाही नही होने देते। बस मुख्य ड़ोर पीड़ितों को मुआवजा देने तक सीमित कर देते हैं। ज्यादातर लोग 'जो किस्मत में लिखा है, उसे कोई नहीं टाल सकता और सभी को एक दिन मरना है।' जैसे जुमलों से अपने को मानसिक तसल्ली दे देते हैं और ऐसी भाग्यवादी अवैज्ञानिक धारणा को मजबूती देते हुए पूरे सिस्टम को आरोप मुक्त कर देते हैं। सरकारों और प्रबंधकों द्वारा जांच समितियों की रिपोर्टों की सुरक्षा सिफारिशों पर अमल नही किया जाता है। तथा आगे होने वाली दु:खद घटनाओं तक सिस्टम सोता रहता है ।

पिछले कुछ दशकों से हमारे देश में धर्म की आड़ में बाबावाद और डेरावाद बड़े पैमाने पर न केवल बढ़ रहा है बल्कि राजनीतिक रूप से शक्तिशाली भी हो रहा है। धर्म की आड़ में गुमराह करके अधिक से अधिक लोगों का आर्थिक, शारीरिक और मानसिक शोषण करना और उन्हें अपने राजनीतिक और आर्थिक हितों के लिए इस्तेमाल करना ज़्यादातर डेरों का मुख्य मकसद बन चुका है। इस उद्देश्य को हासिल करने के लिए डेरों के सेवकनुमा एजेंटों द्वारा बड़े ही योजनाबद्ध ढंग से डेरा प्रमुख की कथित चमत्कारी शक्तियों का अंधाधुंध प्रचार किया जाता है, जिसके प्रभाव में आकर अज्ञानी और अंधविश्वासी लोगों की भीड़ें ऐसे बाबाओं का आशीर्वाद लेने के लिए डेरों की ओर अंधी दौड़ लगाती हैं। इसके बाद अपने अज्ञानी अनुयायियों के वोट बैंक के आधार पर शासक वर्ग की सरपरस्ती और राजनीतिक ताकत हासिल करने की कोशिश डेरों द्वारा की जाती है।

आज देश की बड़ी आबादी को पिछड़ेपन और गरीबी से ग्रस्त होकर महंगाई, भुखमरी, बेरोजगारी, बीमारी, अशिक्षा, असमानता, दुख-क्लेश, रिश्वतखोरी और भ्रष्टाचार जैसी गंभीर समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। आर्थिक और मानसिक पिछड़ेपन के कारण उन्हें समाज और परंपरागत धार्मिक स्थलों में सम्मान भी नहीं मिलता। इन मानसिक तनावों और पारिवारिक समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए वे ऐसे डेरों/आश्रमों की शरण में जाकर अपना और अपने परिवार का सुख-चैन ढूंढते हैं। जिसके लिए लगातार दुखों से निवारण के डेरों द्वारा प्रचार एक सम्मोहन का काम करते हैं।

हकीकत यह है कि हमारे देश के ज्यादातर लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की भारी कमी है जिस कारण आत्मविश्वास और संघर्ष करने की भावना भी कम हो जाती है। नतीजतन, अधिकांश लोग अपनी समस्याओं, ज़रूरतों, इच्छाओं और बीमारियों के समाधान के लिए और अपने सुनहरे भविष्य और कथित अगले जन्म को संवारने के लालच में डेरा/आश्रम गुरुओं द्वारा दिखाए गए काल्पनिक सपनों में फंस जाते हैं और इनको अपना सब कुछ लुटाने के बाद सारी उम्र पछताते रहते हैं।

शिक्षा प्रणाली में भी रूढ़िवादी और मिथक आधारित पाठ्यक्रम पढ़ाए जा रहे हैं, जो विद्यार्थियों और आम लोगों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण, आत्मविश्वास और अपने अधिकारों के

लिए संघर्ष करने की भावना पैदा होने से रोकते हैं। सुबह-शाम टीवी चैनलों पर झूठे अंधविश्वासी प्रचार से मन्नतें मांगने वाली भीड़ पैदा होती रहती है। इस भीड़ का ही शोषण डेरों/आश्रमो में बाबाओं द्वारा किया जाता रहता है। झूठा प्रचार किसी व्यक्ति की मानसिकता को बीमार करने में अहम भूमिका निभाता हैं। भले ही फैलाए जाने वाले अंधविश्वास और अवैध गतिविधियों पर रोक लगाने के लिए ड्रग्स एन्ड मेडिकल रेमेडीज एक्ट 1954 जैसे कानून बने हुए हैं, लेकिन शासक वर्गों द्वारा अपने राजनीतिक हितों के लालच में इस कानून को कभी भी ईमानदारी से लागू नहीं किया गया, यह कानून छोटे मोटे तांत्रिको पर ही लागू किए जाते हैं बड़े व राजनीतिक ताकत प्राप्त बाबाओं के विरुद्ध शायद ही कभी इन कानूनों को लागू किया जाता है, जिस कारण अवैध धंधा बेरोक-टोक चलता रहता है। ज्यादातर प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया द्वारा तांत्रिको, बाबाओं, काला इल्म करने वालों मुल्ला मौलवियों की झूठी विज्ञापनबाजी भी की जाती है।

डेरा बाबाओं द्वारा भोले-भाले श्रद्धालुओं के साथ सबसे बड़ी धोखाधड़ी यह की जाती है कि वे आम लोगों को मोह-माया, झूठ-चोरी, बेईमानी, नशा, अहिंसा, भ्रष्टाचार, पराई औरत और अन्य गलत कामों से दूर रहने और एक साफ-सुथरी साधारण जीवन जीने की सलाह दी जाती हैं, लेकिन उनके आलीशान डेरों और ऊंचे महलों में हर प्रकार की सुविधाएं होती हैं। जो कि बाबाओं के प्रवचनों व आम जनता को देने वाले साधारण जीवन शैली जीवन जीने के विचार के बिल्कुल उल्ट होती है। कई-कई गनमैनों के साथ महंगी गाड़ियों में सवार होकर ये अपने श्रद्धालुओं, उच्च अधिकारियों और समाज में हिंसा और भय पैदा करने की कोशिश करते हैं। सवाल यह है कि यदि ये बाबा स्वयंभू दिव्य शक्तियों के मालिक और सर्वशक्तिमान होने का दावा करते हैं तो फिर अपनी सुरक्षा के लिए गनमैन क्यों रखते हैं?

किसी भी डेरे/आश्रम के मुख्य बाबा की मौत के बाद डेरों में अगले मुखिया को लेकर विवाद होना भी आम बात है जिसमे कई बार कब्जे को लेकर हिंसक झड़पें होती रहती हैं। मोह माया से दूर रहने के प्रवचन देने वाले बाबा के चेले अक्सर गद्दी पर कब्जे को लेकर एक दूसरे के खिलाफ मुखर हो जाते हैं। कई बार विवाद इस स्तर तक बढ़ जाते हैं कि गोलीकांड हो जाते हैं। इस विवाद मे नए नए डेरे वजूद में आते रहते हैं। अगर कोई बाबा विवाहित है उसकी मौत के बाद उसके पुत्रों मे या नंबर दो की भूमिका के नाम से रहने वाले मे विवाद होता है कि अगला प्रमुख कौन बनेगा इस विवाद से श्रद्धालु बंट जाते हैं और फिर एक बाबा के बेटे का और एक मुखिया की दौड़ मे शामिल चेले का अलग अलग डेरा खुल जाता है ।

पिछले कुछ वर्षों में डेरों/आश्रमो में बलात्कार, हत्या, अपहरण, फिरौती और अन्य कई अपराधों की घटनाएँ अखबारों की सुर्खियाँ बनती रही हैं, लेकिन धार्मिक आस्था के तहत सम्मोहित हुए श्रद्धालु इसे अपने संतों, बाबाओं के खिलाफ साजिश मानकर नजरअंदाज कर देते हैं। कुछ श्रद्धालुओं की आँखें तब भी नहीं खुलतीं, जब इन अपराधों के आरोप में पुलिस किसी बाबा को गिरफ्तार कर जेल भेज देती है और उसे सजा भी हो जाती है। वे इस सब को विरोधियों की साजिश,राजनीति कहते रहते हैं और बाबा के प्रति श्रद्धा से टस से मस नही होते ।

बहुत से बाबाओं को बलात्कार, हत्या, अपहरण और अवैध धंधों से सम्मिलित होने के कारण अदालतों द्वारा सजा सुनाई गई है और वे इस वक्त जेलों में बंद हैं। हमारे दिमाग में यह सवाल ज़रूर उठना चाहिए कि यदि उनमें कोई स्वयंभू दिव्य शक्ति होती, तो वह उन्हें जेल जाने से ज़रूर बचाती, लेकिन अंधश्रद्धा मानसिकता से ग्रस्त लोग बाबाओं से सवाल नहीं करते, वे आंखे बंद करके बस झूठे प्रचार को ही सत्य मान कर नतमस्तक होते रहते हैं और अपनी अंतहीन लूट कराते रहते हैं। बहुत से चालाक लोग भी इन से जुड़े रहते हैं जिनको अंदर की सब जानकारी होती है परंतु अपने आर्थिक, राजनैतिक लाभ के लिए वे साथ जुड़े रहते हैं ।

सबसे बड़ा दु:खद यह है कि हमारे समाज का पढ़ा-लिखा वर्ग, जिसमें डॉक्टर, इंजीनियर, शिक्षक, प्रोफेसर, वकील, जज, पुलिस और सिविल अधिकारी, पत्रकार, राजनीतिक नेता और मंत्री तक शामिल हैं, इन डेरों /आश्रमो के बाबाओं के श्रद्धालु बनकर उनके गलत काम को मान्यता देने में अहम भूमिका निभाते हैं। देश को 21वीं सदी में ले जाने का दावा करने वाले हमारे हुक्मरान और बुद्धिजीवी वर्ग ही अगर अंधविश्वास, हिंसा और अपराध फैलाने वाले बाबाओं के पिछलग्गू बन जाएंगे, तो फिर आम समझ-बूझ रखने वाले आम लोगों से वैज्ञानिक सोच अपनाने की कितनी उम्मीद की जा सकती है? बेशक धर्म और जात-पात के नाम पर राजनीति करने और वोट मांगने पर कानूनी पाबंदी है, लेकिन धर्म के

नाम पर चलने वाले इन डेरों के पास लाईलाज श्रद्धालुओं का एक बड़ा वोट बैंक होने के कारण हाकिम जमातों के मंत्री और विभिन्न राजनीतिक पार्टियों के नेता चुनावों के दौरान राजनीतिक समर्थन लेने के लिए अपने पूरे लव लश्कर के साथ डेरा मुखियों के आगे सिर झुकाते हैं। इसी राजनीतिक सरपरस्ती के कारण देश में ऐसे हजारों डेरे/आश्रम पनप रहे हैं और इनके मुखिया कानून की गिरफ्त में आने से बचे हुए हैं।

आधुनिक युग वैज्ञानिक चेतना का युग है। संसार के विकसित देश विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल करते हुए लगातार उज्जवल भविष्य की ओर बढ़ते जा रहे हैं। लेकिन हम लोग भाग्यवाद, आध्यात्मिकता और अंधविश्वासी रवैया अपनाकर बाबाओं के पीछे लगकर अपने कीमती समय और मेहनत की कमाई बर्बाद कर रहे हैं। इसलिए बिना किसी मेहनत के लोगों की कमाई पर ऐश करने वाले और समाज में अंधविश्वास और हिंसात्मक माहौल पैदा करने वाले साधु-संतों के डेरों के पीछे लगना कोई समझदारी की निशानी नहीं है। हमें अपनी बुनियादी समस्याओं और दिन-ब-दिन बढ़ती आर्थिक और सामाजिक असमानता के खात्मे के लिए राजनीतिक नेताओं और सरकारों से लगातार सवाल पूछने चाहिएं और उनसे जवाब मांगने चाहिएं। जीवन में वैज्ञानिक दृष्टिकोण और संघर्ष का रास्ता अपनाकर ही अपनी समस्याओं और दु:खों से छुटकारा पाया जा सकता है।

इसलिए केंद्र और राज्य सरकारों का कानूनी कर्तव्य है कि धर्म की आड़ में समाज में अंधविश्वास फैलाने, अपनी कथित दिव्य शक्तियों के माध्यम से भोले-भाले लोगों को गुमराह कर ठगने, लूटने वाले, बाबाओं के खिलाफ एक प्रभावी अंधविश्वास निरोधक कानून बनाकर इसे पूरे देश में सख्ती से लागू किया जाए। धार्मिक आस्था के तहत अवैध व्यापार करने, अवैध संपत्ति बनाने, किले जैसे डेरे बनाने, हिंसा फैलाने और अवैध हथियार रखने वाले डेरों की पूरे देश में जाँच करवाकर उनके मुखियों की अवैध संपत्ति जब्त करने के अलावा उन्हें सख्त सजा दी जानी चाहिए राजनीतिक पार्टियों द्वारा डेरों की राजनीतिक समर्थन लेने या डेरों द्वारा किसी को राजनीतिक समर्थन देने के आरोप में संबंधित राजनीतिक पार्टी और डेरा दोनों के खिलाफ सख्त कानूनी कार्रवाई की जानी चाहिए और उनकी मान्यता रद्द की जानी चाहिए। देश के सभी डेरों/आश्रमों को आयकर कानून के दायरे में लाया जाए और उनकी अवैध संपत्ति और आय को जब्त करके लोकहित विकास कार्यों पर खर्च किया जाना चाहिए। हर अस्पताल और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र में मानसिक रोग विशेषज्ञ डॉक्टर नियुक्त किए जाने चाहिएं, ताकि लोग बाबाओं और डेरों के जाल में न फँस सकें। आम लोगों की शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार, बिजली, साफ पानी और सीवरेज की बुनियादी सुविधाओं को प्राथमिकता के आधार पर सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

हकीकत यह है कि धर्म, राजनीति और मुनाफाखोर कॉरपोरेट के नापाक गठजोड़ पर उगे इस जन-विरोधी और भ्रष्ट ढांचे को जन-समर्थक राज्य व्यवस्था बनाकर ही आम लोगों को स्थायी रूप से अंधविश्वासों, वहमों और बाबाओं, डेरों के चंगुल से बाहर निकाला जा सकता है। समाज के बुद्धिजीवी और चेतन वर्ग को इस संदर्भ में अपनी जिम्मेदारी निभाने के लिए आगे आना चाहिए।

पृष्ठ 8 का शेष पर जीवन की खोज अभी दूर की बात थी। पृथ्वी के दक्षिणी ध्रुवीय शीर्ष पर 'एण्टार्टिका' का इलाका मंगल के ध्रुवीय शीर्ष के समान है। यहाँ बहुत अधिक विपरीत परिस्थितियों में भी जीवन की खोज की जा सकती है। बर्फीले पानी की तली में अणु जीव पाये जाते हैं जिनको लगभग कोई रोशनी प्राप्त नहीं होती। प्रश्न यह उठता है कि ठीक इसी तरह क्या मंगल पर भी अणु जीव हो सकते हैं? मंगल पर वर्षा नहीं होती। वहाँ केवल सूखा मेघविद्युत होता है। यानी बारिश के बिना बिजली। यह मेघविद्युत मंगल पर जीवन की प्रक्रिया को आरम्भ करने का स्रोत हो सकता है। जिस प्रकार पृथ्वी पर मेघविद्युत जल पर और गैसों पर गिरा और उसने जैविक पदार्थों और जैविक तेज़ाबों का एक मिश्रण बना दिया जिससे जीवन उत्पन्न हुआ, उसी प्रकार मंगल पर भी इस प्रक्रिया के शुरू होने की सम्भावना तो है ही।

आज मंगल पर जीवन नहीं है। लेकिन हो सकता है कि दूर भविष्य में हम मंगल ग्रह को जीने लायक जगह बना सके। मनुष्य तो महाबली है, वह कुछ भी करने की क्षमता रखता है। हो सकता है कि वह मंगल के ध्रुवीय शिखरों का बर्फ पिघलाने में कामयाब हो जाये। वहाँ के वातावरण में जीवन के लिए आवश्यक ऑक्सीजन पैदा करने वाले चक्र की शुरुआत कर सके। ग्रह की सतह और उसके पर्यावरण को वैज्ञानिक तकनीक से बदलने की इस प्रक्रिया को 'टेरा फार्मिंग' कहा जाता है। ज़रा सोचो तो यदि ऐसा हो सकता तो मंगल ग्रह पर सचमुच जीवन फलने-फूलने लगेगा।

(स्रोतः बाल पत्रिका 'कोंपल')

अंधविश्वासों से कब मुक्ति मिलेगी?

– सं. राकेश नाथ

देखें किस तरह अंधविश्वासों का जाल सपने दिखा कर युवकों को मौत के मुंह में धकेल देता है। हम कैसे इन अंधविश्वासों से मुक्ति पा सकेंगे?

हम उपग्रह पर उपग्रह छोड़ रहे हैं, तरह-तरह के अत्याधुनिक वैज्ञानिक उपकरणों का उपयोग बढ़ रहा है। प्रौद्योगिकी के मामले में धनी देशों की बराबरी करने की होड़ मची है किंतु देश के ज्यादातर लोगों की सोच मोटे तौर पर अब भी पुरातनपंथी व अंधविश्वास से जकड़ी हुई है।

हम ने दुश्मन देशों से जंग जीतने के लिए 'अर्जुन,' 'पृथ्वी', 'अग्नि' और 'नाग' बना लिए हैं, पर सड़ी-गली परंपराओं व अंधविश्वासों से लड़ने के मोरचे पर हमारे समाज के पांव लड़खड़ा रहे हैं। वरना 2 लोग बाघ को माला पहनाने क्यों चले जाते? इन में से एक युवक तो मारा गया और दूसरे की जान बड़ी मुश्किल से बचाई जा सकी।

कोलकाता से जुड़े शहर हावड़ा के जयप्रकाश तिवारी को सपना आया था कि वह 1 जनवरी को दिन के ठीक 12.00 बजे अगर बाघ को माला पहना कर उस की पीठ पर सवार हो बांसुरी बजाने में कामयाब हो गया तो उसे 'चमत्कारिक दैवी शक्तियां' हासिल हो जाएंगी।

अब अपने देश में सपनों को लेकर तरह-तरह के मिथकीय सिद्धांत बना लिए गए हैं और बहुत कम लोग ही इसे एक सामान्य मनोवैज्ञानिक 'खुराफात' मानते हैं। इसलिए जयप्रकाश को सपने के 'सच' का ज्ञान कौन कराता? और उसने सपने में मिले आदेश से रोमांचित हो कर बाघ को माला पहनाने की योजना बना ली। इस आत्मघाती योजना में उसने अपने दोस्त सुरेश राय को साथ ले लिया और दोनों कोलकाता के अलीपुर चिड़ियाघर में घुस गए।

बाघों के पिंजड़े और उन के घूमने-फिरने के लिए बने अहाते तक पहुंचना बहुत आसान न था। हिफाजत के लिए पानी से भरा रहने वाला एक चौड़ा नाला भी है। अब वे चाहे पिंजड़े के ऊपर लटकते बरगद के तनों को पकड़ कर फिल्मी अंदाज में वहां पहुंचे हों या नाले को तैर कर, इस से कोई फर्क नहीं पड़ता, मगर वे दोनों शिवा नामक बाघ के पास पहुंचने में कामयाब हो गए।

शिवा

शिवा भी शायद इन 'मेहमानों' के दुस्साहस को देख कर चकित रह गया होगा। वहां मौजूद लोगों के मुताबिक बाघ ने इन्हें भागने का पूरा मौका दिया। आखिर वह नरभक्षी नहीं था पर ये दोनों अपने 'मिशन' में सफल होने के लिए वहां डटे रहे। जब ये लोग किसी माल्यार्पण समारोह की तरह अपनी मालाएं ले कर बाघ के काफी नजदीक पहुंच गए, बाघ ने हमला कर दिया और जयप्रकाश उसका पहला शिकार बना।

अपने दोस्त को मौत के मुंह में जाते देखकर भी सुरेश ने भागने की कोशिश नहीं की। उसने अपने जूडोकराटे की शिक्षा का गुमान सिमरन करते हुए बाघ से लड़ने के लिए बांहे उठा लीं। बाघ भला इस चुनौती को कैसे स्वीकार ना करता? उसने अपने पंजे के वार से सुरेश को लहूलुहान कर दिया और वापस अपने पिंजड़े में चला गया।

8 अगस्त, 1982 को बेंगलूर के चिड़ियाघर में पैदा हुआ शिवा बचपन से ही लोहे की सलाखों से घिरा रहा है। थोड़ी देर के लिए पिंजड़े से बाहर निकलता तो सैकड़ों आदमियों की आंखें उसे घूरती मिलती। खाना, पीना, घूमना सब कुछ कोटे के मुताबिक। इतने सारे बंधनों की वजह से अगर बेचारा शिवा क्षुब्ध रहता हो तो इस में अचरज क्या?

जयप्रकाश

उत्तरप्रदेश के सुल्तानपुर जिले का निवासी जयप्रकाश अंधविश्वास की हद तक धार्मिक था। ढाई साल पहले मन वैराग्य पैदा होने के कारण वह घरबार छोड़ कर चला गया था और काफी कहने-सुनने के बाद ही वापस लौटा था। शायद सपने के बाद उस के लिए ओर रुकना मुमकिन नहीं रहा।

1 जनवरी को वह जब माला लेकर घर से बाहर निकल रहा था तो उसके पिता ने जहर खाकर मर जाने की धमकी दी। इस पर उस का जवाब था, ''बाघ को माला पहना कर लौटूंगा तो तुम्हारी अंतिम क्रिया कर दूंगा।'' 23 साल की उम्र वाली मीरा और 3 छोटे-छोटे बच्चों के भविष्य की परवाह किए बिना जयप्रकाश घर से निकला तो उस की लाश ही वापस लौटी।

सुरेश राय

बिहार के जलीलपुर गांव का रहने वाला सुरेश राय भी

जयप्रकाश की सोहबत में आने के बाद ही भक्त बना। सुरेश ने अस्पताल में जो बयान दिया, उस के मुताबिक जयप्रकाश जानवरों और पक्षियों की भाषा जानता था। वैसे यह अलग बात है कि वह बाघ की गर्जना के रूप में निकली प्राकृतिक हिंसक भाषा नहीं समझ पाया और अपने प्राण गंवा बैठा।

अंधविश्वास की धुंध

यह अंधविश्वास की धुंध ही थी जिसमें उसे बाघ को पहचानने में भूल हो गई। यहां तो बाघ ही नहीं, कुत्ता, गधा, सूअर, चूहा, कौआ सहित करीब-करीब सभी जानवरों व पक्षियों की भी पूजा की जाती रही है। होना यह चाहिए कि इनके साथ सहअस्तित्व और दयाधर्म के मुताबिक सलूक हो। इससे आदमी की श्रेष्ठता तो साबित होती ही है साथ ही पर्यावरण संतुलन बहाल रखने में भी काफी मदद मिलती।

पर वास्तव में ऐसा नहीं है। आदमी एक तरफ इन्हें पूजता रहा और दूसरी तरफ खाल, हड्डियों, मांस या महज अपना शौक पूरा करने के लिए इनका शिकार भी करता रहा है, इन्हें तकलीफ भी देता रहा है।

आदमी और जानवर के बीच इसी असंतुलित रिश्ते से पर्यावरण संबंधी समस्याएं पैदा हुई हैं, एक अरसा पहले बंगाल के जेमसपुर गांव में गांव वालों ने एक बाघ को पीट-पीट कर मार डाला था। उन में से किसी ने बाद में उस का शिश्न काट लिया अब ऐसी मान्यता है कि शिश्न को पानी में उबाल कर उस का सूप पीने से आदमी की मैथुन शक्ति बढ़ती है।

दोनों भक्त जिस बाघ को माला पहनाने गए थे वह 'रायल बंगाल' प्रजाति का है। अवैध शिकार की वजह से देश में इसकी तादाद काफी तेजी से घटती जा रही है। एक तरफ बाघ को माला पहनाने और दूसरी तरफ इस के शिश्न के सूप से यौन शक्ति बढ़ाने के प्रयासों में सचमुच कोई तालमेल नजर नहीं आ रहा है।

आदमी और जानवर के बीच अगर सही व संतुलित रिश्ता होता तो शिवा निहत्थे गए जयप्रकाश व सुरेश की मालाओं को नववर्ष का उपहार समझ कर स्वीकार कर लेता और उन पर हमला न करता: पर न तो आदमी अपने को बदलने के लिए तैयार है और न अभी ऐसी स्थिति आई है कि बाघ अपने प्राकृतिक हिंसक भाव को छोड़ दे। फिर आदमी को इतना समझदार तो होना ही चाहिए कि वह आंखों पर पड़े अंधविश्वास के चश्मे को फेंक बाघ को केवल बाघ के रूप में देख सके।

सूरेश के साथ-साथ जयप्रकाश भी जूड़ो-कराटे में माहिर था। अब हो सकता है कि उन्हें गलतफहमी हो कि आखिर बाघ उन का क्या बिगाड़ लेगा। डब्बाबंद या सिंथेटिक दूध पी कर बड़ी हुई नई पीढ़ी के खास कर संपन्न तबके की युवक-युवतियों ने आजकल जूडो-कराटे व बाडी बिल्डिंग को फैशन के रूप में अपनाया है और इससे उन में एक फर्जी किस्म का आत्मविश्वास पैदा होता जा रहा है।

इस पीढ़ी पर फिल्मों का कितना असर है, यह बताने की जरूरत नहीं, हो सकता है कि सुरेश व जयप्रकाश ने 'बरसात' फिल्म देखी हो, जिसमें हीरो बाघ से लड़ता है और उस का कुछ नहीं बिगड़ता। मगर इतना तो समझना ही चाहिए कि 350 किलो वजन वाले बाघ के एक पंजे के वार का 'वजन' एक क्विंटल से ज्यादा होता है और जूडोकराटे के घूंसों की इस से कोई तुलना नहीं की जा सकती।

जो भी हो अलीपुर चिड़ियाघर में हुए हादसे के लिए अंधविश्वासों से जकड़ा हमारा समाज ही जिम्मेदार है, ये अंधविश्वास इतने परिचित और अधिक हैं कि इन्हें गिनाना बेकार है। मूर्ती को दूध पिलाने से अगर करोड़ों लोगों का कीमती समय बरबाद हुआ और लाखों लीटर दूध नालियों में बह गया तो क्या इसे साथ ही भुलाया जा सकता है, पर 21 वीं सदी के नए भारत के खाके पर इस ने जो धब्बा लगाया उसे मिटाना आसान नहीं है।

डायन के नाम पर

इसी तरह औरतों को डायन कह कर मार देने या घर, गांव से निकाल देने, इच्छित फल पाने के लिए बच्चे-बच्चियों की बलि देने जैसे हादसों की खबरें भी अकसर अखबारों में दिखती हैं। कुछ साल पहले मार्क्सवादियों के शासन वाले पश्चिम बंगाल में 'संतान दल' खड़ा करने वाले बालक ब्रह्मचारी की मौत हो गई, पर भक्तों ने उनके शव को डेढ़ महीने तक रखा कि वह अभी जिंदा है। करीब सौ साल पहले अविभाजित बंगाल के पिछड़े क्षेत्रों में लोग अपनी दूसरी संतान को 'बलवान और बुद्धिमान बनाने' के लिए पहली संतान को गंगा में बहा देते थे।

तथाकथित डायनों के साथ होने वाला बुरा सुलूक भी पिछड़ेपन की ही निशानी है। बिहार व मध्यप्रदेश सहित देश के कई राज्यों के आदिवासी क्षेत्रों में उस समस्या ने कैंसर का रूप ले लिया है। दक्षिण बिहार में इन निर्मम वारदातों को रोकने के लिए सरकारी तौर पर प्रयास **शेष पृष्ठ 15 पर**

विशेष रिपोर्ट

तीन आपराधिक कानूनों और प्रख्यात बुद्धिजीवियों अरुंधति रॉय और प्रोफेसर शेख शौकत हुसैन के खिलाफ यू ए पी ए के तहत मामले दर्ज करने के खिलाफ चालीस के लगभग जन संगठनों द्वारा जालंधर में राज्य सम्मेलन और विरोध प्रदर्शन

– सुमीत अमृतसर

पंजाब के चालीस के लगभग सार्वजनिक लोकतांत्रिक, साहित्यिक-सांस्कृतिक संस्थानों की नए बने कानूनों के खिलाफ संयुक्त समिति द्वारा 21 जुलाई को देश भगत मेमोरियल हॉल जालंधर में एक संयुक्त राज्य सम्मेलन आयोजित किया गया।

इस अवसर पर संबोधित करते हुए मुख्य वक्ता प्रख्यात पत्रकार भाषा सिंह ने कहा कि वर्तमान मोदी सरकार को लेकर हमें कमजोर होने का भ्रम नहीं पालना चाहिए। वह अब ओर भी बड़े हमले की तैयारी कर रही है। सत्ता जनता के संघर्षों से डरती है। अरुंधति रॉय संघर्षों की आवाज होने से सत्ता उनकी कलम से डरती है, इसीलिए वह उन्हें और प्रोफेसर शौकत हुसैन को 14 साल पुराने मामले में यू ए पी ए के तहत फंसाना चाहती है। अरुंधति रॉय कठिन परिस्थितियों में लड़ने, लिखने, बोलने और मुस्कुराने की प्रतिमूर्ति हैं। सत्ता इस मुस्कुराहट से डरती है। उन्होंने कहा कि अगर विपक्षी राजनीतिक दल ऐसे अन्याय के खिलाफ नहीं बोलेंगे तो लोग उनकी बात नहीं सुनेंगे।

सम्मेलन की अध्यक्षता करने वाले नेताओं और पंजाब के कोने-कोने से न्याय-प्रिय लोगों ने कारवां में भाग लिया। सम्मेलन में शामिल विभिन्न वर्गों के मेहनतकश लोगों की समर्पित भावना उल्लेखनीय थी कि भीषण गर्मी के बावजूद वे भरे हुए हॉल में तीन घंटे तक वक्ताओं को सुनते रहे और तीन सौ से अधिक लोग हॉल के बाहर खड़े होकर सुनते रहे।

इस अवसर पर तर्कशील सोसायटी पंजाब के राज्य प्रभारी मास्टर राजेंद्र भदौड़ ने कहा कि बुद्धिजीवियों को चुप करा कर नए कानून थोपने आदि की बेहद खतरनाक साजिश के प्रति लोगों को जागरूक करने में आज की सभा मील का पत्थर साबित होगी और तीन कृषि कानून की तरह ही सरकार के हालिया फासीवादी हमलों को भी जनशक्ति रोकेगी।

इस अवसर पर लोकतांत्रिक अधिकार परिषद के प्रदेश अध्यक्ष प्रोफेसर जगमोहन सिंह ने कहा कि औपनिवेशिक कानूनी व्यवस्था को खत्म करने के नाम पर देश को पुलिस राज्य में बदलने के लिए लाए गए तीन नए आपराधिक कानून नए नामों के तहत औपनिवेशिक कानूनों को मजबूत करते हैं और यह रौल्ट एक्ट से भी अधिक खतरनाक है जिसे रद्द कराने के लिए भारत के स्वतंत्रता सेनानियों ने अपना खून बहाया। उन्होंने कहा कि अरुंधति रॉय, प्रोफेसर शौकत हुसैन, मेधा पाटेकर जैसे बुद्धिजीवियों और अधिकार रक्षकों को चुप करा कर नागरिकों की अभिव्यक्ति की आजादी का गला घोंटने और काले कानून थोपने के फासीवादी हमले के पीछे देश के बहुमूल्य खजाने पर एकाधिकार रखने वाले का हाथ है जिसे पूंजीपतियों और साम्राज्यवादियों को सौंपने की गहरी साजिश है।

जाने-माने वकील एडवोकेट दलजीत सिंह और एन के जीत ने कहा कि 1 जुलाई से लागू किए गए इन कानूनों को संघर्षों से हासिल किए गए लोकतांत्रिक अधिकारों को छीनने का आधार बनाया गया है। यह कानून उन अंतर्राष्ट्रीय संधियों का भी उल्लंघन है जिन पर भारतीय शासकों ने हस्ताक्षर किये हैं। उन्होंने इन कानूनों की बेहद खतरनाक धाराओं का विस्तार से वर्णन किया।

इस अवसर पर प्रख्यात लोकतांत्रिक चिंतक डॉ. परमिंदर ने कहा कि पंजाब में उभर रही लोकतांत्रिक अधिकारों के प्रति जागरूकता और आंदोलन जनसंघर्षों के इतिहास में एक नया अध्याय जोड़ेगा और यह दमनकारी साम्राज्यवाद की फासीवादी सरकार के लिए एक चेतावनी भी होगी. महान गदरी बाबाओं, भगत-सराभाओं के पंजाब के लोग ऐतिहासिक संघर्षों को नही भूले हैं और पंजाब के जुझारू लोग बड़े पैमाने पर जनसमूह के साथ राज्य के फासीवादी कदमों का जवाब देंगे। यह सभा एक चेतावनी भी है कि यदि यह फासीवादी कदम वापस नहीं लिया गया तो इस अभियान को ओर अधिक व्यापक एवं तीव्र किया जायेगा।

सम्मेलन ने सर्वसम्मति से एक प्रस्ताव पारित किया जिसमें मांग की गई कि अरुंधति रॉय और प्रोफेसर शौकत हुसैन के खिलाफ मामला पूरी तरह से वापस लिया जाए; पूर्व में लागू तीन दंडात्मक कानून, चार श्रम संहिता, डिजिटल मीडिया विनियमन और व्यक्तिगत डेटा संरक्षण अधिनियम, सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियम और महाराष्ट्र सार्वजनिक सुरक्षा विधेयक, यू ए पी ए सहित सभी काले कानूनों को निरस्त करना; भीमा-कोरेगांव और अन्य कथित साजिश मामलों के

तहत जेल में बंद लोगों, बुद्धिजीवियों और कार्यकर्ताओं को बिना शर्त रिहा किया जाना चाहिए; 295/295ए के तहत दर्ज सभी मुकदमे तत्काल वापस लिए जाएं; जिन कैदियों ने अपनी सजा पूरी कर ली है उन्हें तुरंत रिहा किया जाना चाहिए; छत्तीसगढ़ और अन्य राज्यों में प्राकृतिक संसाधनों को कॉर्पोरेटों को सौंपने के लिए फर्जी प्रतियोगिताओं, ड्रोन हमलों और अन्य तरीकों से आदिवासियों का शोषण और बेदखली रोकी जानी चाहिए; अल्पसंख्यक मुसलमानों और ईसाइयों के खिलाफ घृणा अभियान, भीड़ हिंसा और बुलडोजर शासन को रोका जाना चाहिए; कश्मीर में सार्वजनिक सुरक्षा अधिनियम और यू ए पी ए के तहत जेल में बंद पत्रकारों, वकीलों और अन्य कार्यकर्ताओं की तत्काल रिहाई; मणिपुर में भाजपा सांप्रदायिक झगड़ों और महिलाओं के खिलाफ यौन हिंसा को तुरंत रोकेगी; गाजा पट्टी में अंधाधुंध हमलों के माध्यम से फ़िलिस्तीनियों का नरसंहार रोका जाना चाहिए और फ़िलिस्तीनी लोगों के फ़िलिस्तीन के अधिकार को स्वीकार किया जाना चाहिए।

सम्मेलन के बाद शहर में आक्रोश प्रदर्शन किया गया

इस मौके पर तर्कशील सोसायटी पंजाब, डेमोक्रेटिक राइट्स सभा पंजाब, देश भगत मेमोरियल कमेटी, जालंधर, बीकेयू (एकता-उग्राहां), पंजाब लोक सांस्कृतिक मंच (पल्स मंच), किरती किसान यूनियन, बीकेयू (डकौंदा-धनेर), क्रांतिकारी किसान यूनियन पंजाब, बीकेयू (क्रांतिकारी), प्रगतिशील लेखक संघ पंजाब, केंद्रीय पंजाबी लेखक संघ, पंजाबी साहित्य अकादमी लुधियाना, केंद्रीय पंजाबी लेखक संघ (सेखों), डेमोक्रेटिक टीचर्स फ्रंट, पंजाब खेत मजदूर यूनियन, आई ए फ टी यू, ग्रामीण मजदूर संघ पंजाब, भूमि अधिकार संघर्ष कमेटी, इस्त्री जागर्ति मंच पंजाब, अदारा वर्ग चेतना, जम्हूरी किसान सभा पंजाब, कुल हिंद किसान सभा, डेमोक्रेटिक लॉयर्स एसोसिएशन पंजाब, वेरका मिल्क एंड कैटल फीड आउटसोर्स यूनियन पंजाब, शहीद भगत सिंह यूथ सभा, नौजवान भारत सभा (ललकार), क्रांतिकारी ग्रामीण मजदूर संघ पंजाब, अनुबंध कर्मचारी मोर्चा पंजाब, पूर्व सैनिक (क्रांतिकारी) संघ पंजाब, ग्रामीण मजदूर संघ (मशाल), क्रांतिकारी मजदूर केंद्र पंजाब (एम ए ए स ए), इंडियन एसोसिएशन ऑफ लॉयर्स (पंजाब इकाई), पंजाब छात्र संघ (ललकार) यूनियन पंजाब, मोल्डर एंड स्टील वर्कर्स यूनियन और पंजाब चंडीगढ़ जर्नलिस्ट एसोसिएशन के नेताओं और कार्यकर्ताओं ने बड़ी संख्या में भाग लिया।

हिन्दी अनुवाद: गुरमीत अंबाला

पृष्ठ 13 का शेष किए जा रहे हैं:

12 जनवरी, 1996 को ही मध्यप्रदेश के गढ़वा जिले के अझिआंव गांव में एक महिला को डायन कह कर गांव से निकाल दिया गया।

वैसे धीरे-धीरे स्थिति बदल रही है, मगर इस बदलाव की रफ्तार काफी धीमी है। इन वारदातों से यही पता चलता है कि हम दो कदम आगे बढ़ कर एक कदम पीछे हट जाते हैं।

जिस समाज ने इन अंधविश्वासों को पाल रखा है, इनके खिलाफ लड़ाई भी इसी समाज के विवेकशील लोगों को लड़नी होगी। सरकारें व सरकारी प्रचार के माध्यम इस मामले में बड़ी भूमिका अदा कर सकते थे, पर वे भी बहुसंख्यक लोगों की भावनाओं और बाजार के गणित पर ही नजर रखते हैं।

दिल्ली में हुई एक विज्ञान कानफ्रेंस में विशेषज्ञों ने ठीक ही कहा था कि लोगों के वैचारिक पिछड़ेपन और अंधविश्वास के लिए राजनीति बाजों व सरकार की जनसंचार नीतियां भी जिम्मेदार हैं :

प्रो. यशपाल ने सरकार की नीतियों की बखिया उधेड़ते हुए कहा था कि 'टर्निंग प्वाइंट' तथा वैज्ञानिक चेतना विकसित करने वाले अन्य कार्यक्रमों को दूरदर्शन ऐसे समय प्रसारित करता है जब बहुत कम लोग टीवी के सामने होते हैं, जबकि अंधविश्वास फैलाने वाले अन्य धारावाहिकों का प्रसारण प्राइम टाइम में होता है।

टेलीविजन जैसे सशक्त जनसंचार माध्यम का खतरनाक तरीके से उपयोग सचमुच चिंताजनक है। खैर, जैसे भी हो लोगों को यह बताया जाना चाहिए कि बाघ एक खतरनाक जानवर है और उससे भी ज्यादा खतरनाक है अंधविश्वास।

(स्रोत : किताब ''तर्क से काटिए अंधविश्वासों का जाल।''

ऐ इन्सानों!

आँधी के झूले पर झूलो
आग बबूला बन कर फूलो
कुरबानी करने को झूमो
लाल सबेरे का मूँह चूमो
ऐ इन्सानों!
ओस न बाटो
अपने-हाथों पर्वत काटो।

- मुक्तिबोध

मार्क्स की ''पूँजी'' पर आधारित पाठ

बच्चों के लिए अर्थशास्त्र

– रंगनायकम्मा

पुराना श्रम और नया श्रम

किसी वस्तु को बनाने के लिए जितना कुल श्रम जरूरी हो वही उस वस्तु का मूल्य होता है। है न? इस कुल श्रम में कुछ पुराना श्रम और कुछ नया श्रम होता है। वस्तु बन जाने पर ये दोनो ही श्रम मिलकर ''पुराना श्रम'' हो जाते है। किसी वस्तु को बनाने के लिए कच्चा माल, औज़ार और सहायक सामग्री जरूरी होती है। इनके बगैर कोई वस्तु नहीं बन सकती। ये तीनों संघटक भी श्रम से ही बने होते हैं। उनका सारा श्रम हो चुका होता है। इसीलिए इसे पुराना श्रम कहा जाता है। अब इन तीनों संघटकों से जो श्रम किया जाता हो वह नया श्रम कहलाता है। घड़ा बन जाने के बाद घड़ा बनाने का पूरा श्रम पुराना श्रम हो जाता है।

जब किसी कपड़े से कमीज सिली जाती हो, तो उस कपड़े को बनाने में जितना श्रम पहले लग चुका हो वह पुराना श्रम होता है। इस कपड़े पर अब सिलाई का जो श्रम किया जाता हो वह नया श्रम होता है। कमीज बन जाने के बाद यह सिलाई का श्रम भी पुराना श्रम हो जाता है।

पुराने श्रम के अन्य नाम :

'पिछला श्रम'। 'तैयार श्रम'। 'वस्तु-रूपी श्रम' (सभी उत्पादन के साधन किसी वस्तु के रूप में होते हैं। इसीलिए उत्पादन के साधनों में मौजूद श्रम को 'वस्तु-रूपी श्रम' कह सकते हैं।) 'मृत श्रम' (उत्पादन के साधन जीवित नहीं होते, इसीलिए उनमें जो श्रम होता है उसे 'मृत श्रम' कह सकते हैं)। हम जिस भी नाम का प्रयोग करें, यह बात उत्पादन के साधनों की ही है यानि पुराने श्रम की।

नये श्रम के अन्य नाम:

वर्तमान श्रम। जारी श्रम। जीवन्त श्रम (इसलिए कि जीवित लोगों को उसी दौरान श्रम करते देखा जा सकता है)। नाम जो भी हो, यह बात है नये श्रम की।

अगर पिछला श्रम न हो (न कोई कच्चा माल हो, न औजार, न सहायक सामग्री), तो नये किस्म का कोई श्रम नहीं किया जा सकता है। ('कुदरत से कोई सामग्री निकाल लाने के श्रम' या 'खनन श्रम' के लिए कच्चे माल तो नहीं, पर अन्य संघटक अनिवार्य होते हैं।)

किसी चीज का 'विनिमय-मूल्य' श्रम के अलावा कुछ भी नहीं होता। यह नये और पुराने श्रम का योग होता है। यह सब श्रम ही है, इसलिए इसे 'श्रम' ही कहना उचित है। पुराने और नये श्रम में भेद करना हमेशा जरूरी नहीं होता। यह भेद तभी करना पड़ता है जब इस बात को जानना जरूरी हो।

कुछ चीजें ज्यादा श्रम से बनती है, तो दूसरी चीजें कम श्रम से बनती हैं। यदि श्रम ज्यादा हो, तो उस चीज का मूल्य ज्यादा होगा। श्रम कम हो, तो मूल्य कम होगा।

खेती के श्रम से बने उत्पादों का मूल्य हमेशा एक-समान नहीं होता। इसलिए कि एक एकड़ किसी जमीन पर जितनी फसल किसी समय उगायी जाती हो हर बार उतनी ही नहीं हो जाती। फसल ज्यादा हो जाये, तो एक बोरा अनाज के लिए जरूरी श्रम-समय घटता है और उस बोरे का मूल्य भी घट जाता है। अगर फसल कम हो जाये, तो उतने ही एक बोरे के लिए जरूरी श्रम-समय बढ़ जाता है और उस बोरे का मूल्य भी बढ़ जाता है। अगर उस अनाज से चावल बनाया जाये और फिर चावल की रोटी, तो इस अनाज से बनाये जाने वाली चीजों का मूल्य भी अनाज के मूल्य में उतार-चढ़ाव के अनुसार कम या ज्यादा हो जाता है।

किसी चीज का मूल्य उसे बनाने के लिए जरूरी श्रम ही होता है।

घड़े का मूल्य है-2 घंटे का श्रम।

जूतों का मूल्य है-2 घंटे का श्रम।

दोनों चीजों का मूल्य समान होने का कारण ही दोनों का विनियम हो पाता है। जूतों का मूल्य 2 घंटे है न? अगर घड़े का मूल्य सिर्फ एक घण्टा श्रम ही हो, तो दोनों का आपस में विनियम नहीं हो पायेगा। फिर कुम्हार अगर जूतों की जोड़ी चाहता हो, तो उसे अपने 2 घड़े देने होंगे। केवल तभी इन मूल्यों का विनियम उचित होगा।

विनियम समान मूल्य की चीजों के बीच ही होता है, न कि अलग-अलग मूल्यों की चीजों के बीच। यह है 'मूल्य का नियम'।

हम देख चुके हैं कि 'मूल्य' का मतलब श्रम ही होता है। घड़े का मूल्य है-2 घंटे का श्रम। लेकिन क्या घड़े की ओर देखने मात्र से ही हम उसका 'मूल्य' देख पाते हैं? घड़े

की ओर देखने पर हम उसकी शारीरिक विशेषताओं को देख सकते हैं। यह देख सकते हैं कि वह काला है या सफेद, बड़ा है या छोटा।

हम अगर कमीज को देखें, तो यह पता कर सकते हैं कि 'यह किसी दर्जी के श्रम से बनी हैं।' कुर्सी को देखने पर हम जान लेते हैं कि 'वह किसी बढ़ई के श्रम से बनी है।' किसी भी वस्तु की ओर देखने पर ठीक-ठीक जाना जा सकता है कि उस वस्तु को बनाने में किस तरह का श्रम लगा होगा।

लेकिन वस्तुओं के शरीर में हम 'मूल्य' की विशेषता नहीं देख पाते हैं। इसलिए कि: श्रम का मतलब मूल्य हो, तो भी किसी चीज में जो श्रम अपने खास रूप में दिखता है, ठीक वही श्रम मूल्य नहीं होता। 'विनियम-मूल्य' का मतलब यह नहीं होता कि किसी चीज को बनाने में जितने भी श्रम लगे हों वे सब सीधे अपने-अपने रूप में दिखायी देते हों। वह एक खासी प्रक्रिया होती है जिससे किसी वस्तु में दिखने वाला श्रम अपने मूल्य में रूपान्तरित होता हो। कमीज में दर्जी का श्रम या कुर्सी में बढ़ई का श्रम दिख पाना ही मूल्य को देख लेना नहीं होता।

फिर हम मूल्य कैसे देख सकते हैं?

सवाल और जवाब

1. 'पुराना' श्रम क्या होता है? 'नया' श्रम क्या होता है? उदाहरण सहित बताएँ।

जवाब: पुराने श्रम का मतलब है वह श्रम जो किया जा चुका हो। नये श्रम का मतलब है वह जो किया जा रहा हो। कपड़े की कमीज सिलनी है। कपड़ा पहले से बना हुआ है। जिस श्रम से कपड़ा बना है वह पुराना श्रम है। उस कपड़े पर जो सिलाई का श्रम किया जा रहा हो वह नया श्रम है। जिस श्रम से औजार बने हों वह भी पुराना श्रम है। जिस श्रम से सुई बनी हो वह भी पुराना श्रम है। सुई के प्रयोग से जो सिलाई का श्रम हो रहा हो वह नया श्रम है। थोड़ें में कहे, तो उत्पादन के साधनों को बनाने के लिए किया जा चुका श्रम पुराना श्रम होगा। इन साधनों के प्रयोग से किया जाने वाला श्रम नया श्रम होगा।

2. पुराने श्रम और नये श्रम के दूसरे नाम क्या हैं?

जवाब : पुराना श्रम =पिछला श्रम = मृत/निर्जीव श्रम = तैयार श्रम

नया श्रम = वर्तमान श्रम = जीवन्त श्रम = जारी श्रम।

3. इन्सान कौन सा श्रम करते हैं? पुराना श्रम या नया श्रम?

जवाब : वे इनसान ही होते हैं जो कोई भी और हर श्रम करते हों। वे इनसान ही थे जो पुराना श्रम कर चुके हों। इनसान ही नया श्रम करते हैं।

4. पार्वती कमीज सिल रही हैं। यह जो श्रम अभी चल रहा है वह पुराना है या नया?

जवाब : जो चल रहा है वह नया श्रम होगा। जो हो चुका हो वह पुराना श्रम होगा। कपड़ा, धागा, बटन-सब बन चुके हैं।

5. कुर्सी अभी-अभी बनी है। जिस श्रम से यह कुर्सी बनी है वह पुराना है या नया?

जवाब : कुर्सी चूंकि बन चुकी है, उसे बनाने में जो भी श्रम लगा हो वह सब पुराना श्रम होगा।

6. कमीज बनाने के लिए कपड़े की जरूरत होती है। कपड़ा बनाने के लिए सूत की जरूरत होती है। सूत बनाने के लिए कपास की जरूरत होती है। कपास बनाने के लिए खेती करने की जरूरत होती है। कमीज इन सारे श्रमों में से किस श्रम से बनती है?

जवाब : यहां बात उस श्रम की हो रही है जो कमीज बनाने के लिए जरूरी कच्चे माल पर किया जाता हो। कपड़ा इस कमीज के लिए कच्चा माल है। इस कपड़े पर जो श्रम किया जाता हो वह सिलाई है। इसीलिए हम कहेंगे कि 'कमीज (दर्जी के)सिलाई-श्रम से बनती है।' यही बात किसी भी और हर वस्तु के सन्दर्भ में कहनी हो तो, यह कहना होगा कि वस्तु विशेष को बनाने की प्रक्रिया में जो श्रम किया जाता हो वह नया श्रम होता है।

7. दर्जी का श्रम क्या कमीज बनाने के लिए काफी है? जिस बुनाई के श्रम से कपड़ा बनता हो और जिस खेती के श्रम से कपास बनता हो, क्या उनकी जरूरत नहीं?

जवाब : बुनाई का श्रम कपड़ा बनाने के लिए जरूरी होता है, कि कमीज बनाने के लिए। खेती का श्रम न तो कपड़ा बनाने के लिए जरूरी होता है और न ही कमीज बनाने के लिए। हम अगर हर पिछले श्रमों की बात करने लगे तो क्या हल बनाने के श्रम और करघा बनाने के श्रम की भी बात करेंगे? और तो ओर, हल और करघा बनाने के लिए कोई साधन भी तो जरूरी होते हैं। उन साधनों को बनाने के लिए कोई ओर साधन जरूरी होते हैं। इस तरह यह बात अन्तहीन पीछे जाती रहेगी। इसीलिए यह बात कोई मायने नहीं रखती।

कमीज चूंकि दर्जी के कपड़े पर किये जाने वाले श्रम से बनती है, इसीलिए सिर्फ दर्जी की सिलाई की ही बात करनी होगी। कच्चे माल और औजारों में सारा का सारा पिछला श्रम मौजूद रहता है। हर पुराने श्रम के साथ नया श्रम आ जुड़ता है। किसी भी और हर वस्तु के साथ ऐसा ही होता है।

8. किसी वस्तु के उत्पादन के लिए क्या-क्या जरूरी होता है।

जवाब : उत्पादन के साधन + श्रम।

पुराना श्रम + नया श्रम।

9. औजार में कौन सा श्रम है?

जवाब : पुराना श्रम।

10. नया श्रम क्या कहीं अलग और अलग-थलग होता है?

जवाब : नहीं। जब कोई नया श्रम किया जाता हो, तो कच्चे माल और औजारों की खपत हो रही होती है। यानि नये श्रम के साथ-साथ पुराना श्रम भी लग रहा होता है।

हम 'मूल्य' कैसे देख सकते हैं?

हम किसी भी वस्तु को देख कर उसके शारीरिक गुणों को पहचान लेते हैं। उसका उपयोग क्या हो सकता है यह समझ लेते हैं। कमीज पहनने के लिए है। घड़ा पानी भरने के लिए है। कुर्सी बैठने के लिए है। इस प्रकार हर चीज का उपयोग-मूल्य उसके शारीरिक गुणों के जरिये दिख जाता है। मगर किसी भी वस्तु का मूल्य (विनियम-मूल्य) उस वस्तु को देखने पर दिखता नहीं है। फिर मूल्य, जो किसी चीज के शरीर में बसा न हो, उसे हम कैसे देख सकते हैं? क्या इसका यह मतलब होगा कि हम उसे देख ही नहीं सकते?

उसे हम क्यों देख नहीं पाते? 'मूल्य' का मतलब 'विनिमय-मूल्य' ही तो है न? जब कोई विनियम होता हो तब तो विनियम-मूल्य जरूर हो जाता होगा।

हम मूल्यों की चर्चा कर चुके हैं। जब घड़े और जूतों की जोड़ी का आपस में विनियम हुआ, तो हुआ क्या था? हमने तब क्या देखा था?

'मूल्य' यहां दिख रहा है। घड़े के बदले जो लिया जा रहा है वह घड़े का मूल्य है। जूतों के बदले जो लिया जा रहा है वह जूतों का मूल्य है।

घड़े का मूल्य है-जूते।

जूतों का मूल्य है -घड़ा।

जब जूते दिये जाते हों और बदले में घड़ा लिया जाता हो, तो जूतों का मूल्य घड़े का मूल्य बन जाता है। इसी तरह जब घड़ा दिया जाता हो और बदले में जूते लिये जाते हों, तो घड़े का मूल्य जूतों का मूल्य बन जाता है।

घड़े का अगर कोई विनियम न ही हो तो? घर में लोग उसका इस्तेमाल कर रहे हैं। उन्होंने इसे विनियम के लिए जाने नहीं दिया है। घड़ा अभी कुम्हार के पास से हटा नहीं है। उसने बदले में कोई दूसरी वस्तु नहीं ली है। ऐसी स्थिति में हम घड़े का मूल्य नहीं देख पाते हैं।

किसी वस्तु का अगर विनियम न हो, तो इसका अर्थ क्या यह होगा कि उसका कोई मूल्य है ही नहीं? क्या इसका मतलब यह होगा कि वह वस्तु श्रम से नहीं बनी होगी, इसलिए उसका कोई मूल्य नहीं होगा? नहीं, ऐसी बात नहीं है। श्रम न हो, तो कोई वस्तु नहीं बन सकती। सबसे पहली बात यह कि हर वस्तु बनायी हुई होती है। उसके बाद उस वस्तु का विनियम होना या न होना, अलग बात होती है। वस्तु का विनियम हो या न हो, हर वस्तु श्रम से ही बनती होती है। वस्तु का मूल्य हम तभी देख पाते हैं जब उसका कोई विनियम हो। अगर विनियम न हो, तो मूल्य का सवाल नहीं उठता।

जब घड़े का विनियम होता हो, तब उसका मूल्य तो किसी ओर वस्तु के रूप में होगा न? क्या यह आश्चर्य की बात नहीं कि वस्तु का मूल्य उस वस्तु से हटा हुआ और अलग से हो?

सवाल और जवाब

1. कोई वस्तु बनी है। उसे देखें, तो हम उसका रंग जान जाते हैं। क्या हम उसका मूल्य जान सकते हैं?

जवाब : नहीं। मूल्य इसलिए नहीं देखायी देती कि वह किसी वस्तु के शरीर में बसी नहीं होती।

2. एक मिट्टी का कुल्हड़ और चांदी का जग अगल-बगल रखे हुए हैं। इनकी ओर देखें, तो यही मालूम होगा कि मिट्टी के कुल्हड़ का मूल्य कम और चांदी के जग का मूल्य ज्यादा होगा? इसका तो यही मतलब होगा न कि इन वस्तुओं का मूल्य हमें दिख पा रहा है?

जवाब : इन जैसी वस्तुओं को हमने पहले कई बार देखा होता है। सुना होता है कि सोने का मूल्य मिट्टी के मूल्य से ज्यादा है। अपने इन्हीं अनुभवों के आधार पर हम कुछ हद तक अंदाजा लगा लेते हैं कि हम जिस वस्तु को देख रहे हैं उसका मूल्य क्या होगा? हम मान लेते हैं कि मिट्टी के कुल्हड़ का मूल्य कम और चांदी के **शेष पृष्ठ 19 पर**

भीड़ मर गयी, गैलीलियो नहीं मरा....

हम सब को बहुत गुस्सा आता है,

जब हम पढ़ते हैं कि किस तरह क्रूर ईसाई धर्मान्धों ने गैलीलियो को उम्र कैद दे दी थी !

गैलीलियो का गुनाह क्या था? उसने सच बोला था! उसने कहा था कि सूर्य पृथ्वी के चारों तरफ नहीं घूमता ... बल्कि पृथ्वी सूर्य के चारों तरफ घूमती है !

जबकि ईसाई धर्मग्रन्थ में लिखा था कि ... पृथ्वी केन्द्र में है और सूर्य तथा अन्य गृह उसके चारों तरफ घूमते हैं !

गैलीलियो ने जो बोला वो सच था! ईसाई धर्मग्रन्थ में झूठ लिखा था, इसलिए... धर्मग्रंथ को ही सच मानने वाले सारे धर्मान्ध गैलीलियो के विरुद्ध हो गये !

गैलीलियो को पकड़ लिया गया...

गैलीलियो पर मुकदमा चलाया गया! अदालत ने सत्य को अपने फैसले का आधार नहीं बनाया! बल्कि ... अदालत चर्च से डर गयी!

अदालत ने फ़ैसला दिया...

इसे पूरी उम्र कैदी बना कर रखा जाए, क्योंकि इसने लोगों की धार्मिक आस्था के खिलाफ बोला है !

कैदी बना लिया गया गैलीलियो !

सत्य बोलने के कारण !

सत्य हार गया ... अंधविश्वासी आस्था जीत गयी !

आज भी जब हम ये पढ़ते हैं तो...

सोचते हैं कि काश तब हम जैसे समझदार लोग होते तो ऐसा गलत काम न होने देते !

लेकिन अगर मैं आपको बताऊँ कि ऐसा आज भी हो रहा और आप इसे होते हुए चुपचाप देख भी रहे हैं तो भी क्या आप में इसका विरोध करने का साहस है ?

भयंकर स्थिति है !

सच नहीं बोला जा सकता !

विज्ञान का उपयोग हथियार बनाने में हो रहा है !

विज्ञान की खोज टी वी है, सोशल मीडिया है, मोबाइल है, कम्प्यूटर है।

टीवी और सोशल मीडिया का इस्तेमाल लोगों के दिमाग बंद करने में किया जा रहा है!

इतना ही नहीं....

लोगों को भीड़ में बदला जा रहा है! भीड़ की मानसिकता को एक जैसा बनाया जा रहा है !

जो अलग तरह से बोले उसे मारो या जेल में डाल दो !

अलग बात बोलने वाला अपराधी है !

सच बोलने वाला अपराधी है !

यह भीड़ हिंदुस्तान से लेकर अमेरिका तक फ़ैली है।

भीड़ तर्क को नहीं मानेगी !

वो इतिहास को नहीं मानेगी !

विज्ञान को जूतों तले रोंद देगी !

कमजोर को, किसान को, मजदूर को मार देगी !

और फिर ...ढोंग करके खुद को धार्मिक कहेगी !

मेरा अंत उससे ज्यादा बुरा हो सकता है !

पर देखो न....

भीड़ मर गयी ...गैलीलियो नहीं मरा !

अजय असुर 63937 93888

पृष्ठ 18 का शेष जग का मूल्य ज्यादा होगा। पर इसलिए नहीं कि मूल्य उनके शरीर में दिख जाता हो।

3. घड़े का मूल्य क्या है?

जवाब : नहीं जानते। जब इस घड़े का विनियम होगा और बदले में दूसरी वस्तु मिल जायेगी, तो वह वस्तु इस घड़े का मूल्य होगी।

4. इसका क्या मतलब है?

जवाब : यह विनियम है।

5. कुछ अनाज = कुर्सी का क्या आशय है?

जवाब : यह कि दोनों वस्तुओं का श्रम-मूल्य समान है। अनाज देने पर कुर्सी ली गयी है।

कुर्सी देने पर अनाज लिया गया है। यह वस्तु विनियम है। घड़े और जूतों के बीच जो विनियम हुआ है वह भी वस्तु-विनिमय ही है।

‘माता’ की चौकी

एक बेरोजगार युवक के घर एक दिन उसकी नजदीक की एक रिश्तेदार आंटी आयी। आंटी ने कहा ‘‘हमारे पड़ोस में एक औरत चौकी लगाती है। तुम मेरे साथ चलो, वह तुम्हारा काम चला देगी। हमारे अपने ऐसे बेरोजगार घूमें तो हमे तो शर्म आती है भाई।’’

बेरोजगार को अक्सर बुद्धू भी समझ लिया जाता है और दुनियां भर के लोग उसे सलाह भी दे जाते हैं। बेरोजगार युवक बहुत सारी सलाहों से आहत था लेकिन चौकी वाली सलाह तो अल्टीमेटम थी, ऊपर से परिवार वालो का दबाव भी कि ‘‘नास्तिक है, किसी की माने तो काम चले।’’

युवक को उस दिन अपनी बेरोजगारी पर शर्मिंदगी महसूस हुई कि यही सलाह आनी बाकी थी शायद। फिर भी उसने संयमित होते हुए अपनी रिश्तेदार से कहा– ‘‘आंटी, मुझे मेरी बेरोजगारी का कारण मालूम है। छोटा काम मैं करूँगा नहीं, बढ़े काम के लिए जो योजना बनाई है उसके लिए फाइनैंसर तलाश रहा हूँ, इसमें चौकी कुछ नहीं कर सकती।’’

आंटी लेकिन अड़ गयी, बोली ‘‘माता जब रास्ते खोलेगी तब बढ़ी पार्टी भी मिल जायेगी, तू चल।’’

युवक को मालूम था कि अगले छः महीने तक रोजगार का कोई दृश्य नहीं है। उसने आंटी से कहा कि आप अगर पक्का आश्वासन लेकर दो कि वह तय समय के भीतर काम चला देगी तो आपकी ‘माता’ जो कहेगी वह मैं करूँगा, लेकिन मैं किसी जीव की बलि वहां नहीं दूंगा यह बात स्पष्ट कर देना उन्हें।

‘माता’ से मिल लिया गया, ‘माता’ ने आश्वासन दे दिया कि ‘‘तुम्हारा काम चलाना मेरा काम, तुम बताओ तुम क्या करोगे मेरे लिए।’’

युवक ने सख्त भाव से कहा ‘‘अगर काम चल गया तो बहुत दान–दक्षणा दूंगा, नहीं चला तो आपको जेल जाना पड़ेगा।’’

चारों ओर सन्नाटा छा गया। आंटी ने सन्नाटे को तोड़ा, खिसियानी हंसी हंसती हुई वह बोली, ‘‘मजाक कर रहा है ये तो, मैं तो सिर्फ अर्जी लगा सकती हूँ।’’

युवक सख्त बना रहा, बोला ‘‘मैं मजाक नहीं कर रहा, मैं मेरा वादा पूरा करूँगा, यह या वह, ये आप सोचिये।’’

‘माता’ के अहम को धक्का लगा। वह किसी कथित शक्ति के मद में चूर थी, उसने युवक से वादा कर लिया। यह भी सोचा होगा की बड़ा क्लाइंट है, काम क्लिक कर गया तो सुविधा बढ़ जायेगी।

‘माता’ ने कहा, पांच शनिवार चौकी पर आना पड़ेगा, हर शनिवार कलेजी, शराब और लडडू चढाने हैं, तुम्हे कुछ नहीं लाना, बस उसका जो खर्च हो वह देते रहना। युवक ने कलेजी पर ऐतराज किया लेकिन फिर थोड़ी समझाईश के बाद उसने पांच चौकी तक सब्र रखने की ठान ली।

युवक हर चौकी की कारवाही अपने मोबाइल में रिकॉर्ड करता रहा। ‘माता’ अपने अहम और मद में चूर ही रही, उसने आंटी से इशारों में कह दिया था कि इसका घमंड तो मैं घुटनो में लाकर छोडूंगी।

तीसरी चौकी में ‘माता’ ने कहा– ‘‘दो चौकियां भरने के बाद तुम्हारा सारा इतिहास मेरे सामने क्लियर हो गया है। तुमने संत महात्माओं का कभी सम्मान नहीं किया, इसीलिए वह तुमसे सख्त नाराज हैं, आज तुम्हे यहाँ अपनी नाक से लकीर खींच कर माफी मांगनी है।’’

युवक ने कड़वी नजरों से ‘माता’ को देखा और कहा, ‘‘याद रखना पांचवी चौकी भी आएगी!’’

माता युवक की नजरें देख कर इस बार थोड़ा सहम गयी, युवक ने नाक से लकीर खींची, सारी कारवाही उसने मोबाइल में रिकॉर्ड की और अपने घर रवाना हो गया।

चौथी चौकी पर माता थोड़ा सहमी हुई थी, वह युवक से बोली ‘‘हमे बलि तो देनी ही पड़ेगी, मैं तो आदेश की गुलाम हूँ, मुर्गा तुम्हे चढ़ाना पड़ेगा, नहीं तो मेरा जवाब है।’’

युवक ने कहा, ‘‘बीच का कोई रास्ता नहीं है अब, बलि के लिए मैंने पहले दिन मना किया था। आपको भी मैं जवाब नहीं देने दूंगा, पांच चौकी मैं आऊंगा जरूर।’’

अब ‘माता’ बहुत डर गयी। जैसे तैसे उसने चौथी चौकी पूरी करवाई और युवक को विदा किया! युवक के जाते ही पीछे से युवक को सन्देश भिजवा दिया गया कि ‘‘मैं तुम्हारा काम नहीं करुँगी, बलि के बिना तुम्हारा काम नहीं होगा। अगली चौकी में आने की जरुरत नहीं!’’ **शेष पृष्ठ 25 पर**

वैज्ञानिक सोच के घोषणा पत्र

– वेदप्रिय

देश की आजादी के बाद के समय में हम विभिन्न पड़ावों पर वैज्ञानिक क्षेत्र में विभिन्न प्रवृत्तियां साफ देख सकते हैं। यद्यपि यह सब आजादी से पूर्व के लगभग 100 वर्षों के भारतीय नवजागरण की ताकत ही थी कि हम आजादी के तुरंत बाद के वर्षों में इस क्षेत्र में कुछ ठोस कर पाए। इस बारे में सबसे पहला नाम हमारे दिमाग में जवाहरलाल नेहरू का आता है। इन्होंने वैज्ञानिक मानसिकता की शब्दावली को गढ़ा (सन 1946)। सन 1958 की विज्ञान नीति में इसकी संकल्पना कुछ आगे बढ़ी। इसमें इसका एक वैचारिक धरातल मौजूद था। यह एक प्रकार से मानव संसाधन, वैज्ञानिक व तकनीकी उपलब्धियों और आर्थिक संसाधनों का सम्मिश्रण था। सन 1976 में यह शब्द 'वैज्ञानिक मानसिकता' संवैधानिक शब्दावली का हिस्सा बना। परंतु अभी तक यह पूरे अर्थों में व्यक्त नहीं हो पा रहा था। इस बारे पहली बार एक कार्यशाला सन 1980 में कूनूर में हुई। यहां इस पर गंभीर मंथन हुआ। अगले वर्ष 1981 में नेहरू केंद्र मुंबई द्वारा इसे जारी कर दिया गया। इसे वैज्ञानिक मानसिकता का घोषणा पत्र कहा गया। इस पर व्यक्तिगत रूप में उस समय के जानेमाने 27 वैज्ञानिकों ने हस्ताक्षर किए थे। इनमें कुछ प्रमुख नाम है, प्रोफेसर सी एन आर राव, डॉक्टर आर रमन्ना, डॉक्टर सतीश धवन, श्याम बेनेगल, रजनी पटेल, पी एन हक्सर एवं डॉ पी एम भार्गव आदि।

इस घोषणा पत्र की उद्देशिका में कहा गया कि यद्यपि मानवजाति की सभ्यता का इतिहास ज्ञान के उत्तरोत्तर विकास का इतिहास भी रहा है, लेकिन इस बात की गारंटी नहीं कहीं जा सकती कि यह ज्ञान का विकास स्वतः ही मानव समाज के विकास का वाहक भी होगा। इसका एक उदाहरण दिया गया कि 15वीं सदी के पुनर्जागरण में इटली (गैलीलियो, विंसी आदि)की महत्वपूर्ण भूमिका थी, लेकिन चर्च के शिकंजे के कारण इटली ही विकास की होड़ में पीछे हो गया। जबकि उत्तर यूरोप के अन्य देश (इंग्लैंड, हॉलैंड आदि) इस दौड़ में कहीं आगे निकल गए। हम अपने देश में भी प्राचीन काल में देख सकते हैं कि कई ऐसे दौर गुजरे हैं जहां प्रश्न करने पर मनाही रही। हमने उसके दुष्परिणाम भी भुगते। एक लंबे दौर की गुलामी भी एक कारण रही कि हम आधुनिक युग में विश्व के साथ मुकाबले में पीछे रह गए। हमारे यहां नवजागरण देरी से आया और वह भी रूढ़ियों से पूरी तरह लड़ते हुए नहीं। हमने समाज सुधार के क्षेत्र में तो कुछ काम किया, लेकिन रूढ़ियों के विरुद्ध निर्णायक लड़ाई हमने नहीं लड़ी। यहां रूढ़ियों की जकड़न बहुत गहरी रही ।

इसी जद्दोजहद के बीच यहां वैज्ञानिक मानसिकता पर कुछ काम हुआ। सन 1981 के घोषणा पत्र में कहा गया कि वैज्ञानिक मानसिकता, विज्ञान एवं तकनीकी की जानकारी से कहीं आगे की बात है। इसमें एक विशेष मनः स्थिति की मांग है। इससे हमारे दैनिक जीवन का व्यवहार संचालित होता है। यह एक नई मूल्य व्यवस्था का निर्धारण है कि हम किस नजर से इस दुनिया व समाज को देखते हैं। वैज्ञानिक मानसिकता का दखल हर सामाजिक क्षेत्र में है। वैज्ञानिक मानसिकता वैज्ञानिक विधि पर ज्यादा जोर देती है और कहती है कि यह विधि ज्ञान प्राप्त करने का अब तक का प्राप्त सर्वाधिक कारगर तरीका है। इससे मानवीय समस्याएं समझी व हल की जा सकती हैं ।यह तरीका सच के सर्वाधिक निकट पहुंचने में हमारी मदद करता है। इसको अपनाये बिना न हमारा अस्तित्व संभव है और न ही हमारी तरक्की। यह अपरिहार्य है। लेकिन इसके मूल में यह बात भी निहित है कि यह हर समय का सच नहीं होता है। हमें समय-समय पर समकालीन ज्ञान को पैदा करने वाली बुनियादी बातों को परखते रहना होगा। यह एक प्रकार की पुनरउत्पादन की प्रक्रिया ही है। यह सब खोज भावना से ही संभव होता है। प्रश्न करने के अधिकार की स्वीकारोक्ति वैज्ञानिक मानसिकता का आधार है। प्रश्न करने के अधिकार में यह बात भी शामिल है कि इसमें आपकी जवाबदेही भी है। यह जवाबदेही एक तो आपके काम के कर्तव्य को पूरा करने में है, दूसरे इस बात में भी है कि यदि आप देख रहे हैं कि यदि सब कुछ ठीक नहीं हो रहा तो आप चुप क्यों हैं।

वैज्ञानिक मानसिकता तर्क व विवेक से बनती है। आलोचनात्मक सोच के बिना यह संभव नहीं। यह हर समय मरम्मत में रहती है। यह खुला दिमाग रखने से ही चलती है। इसमें प्रायः पूर्व निर्धारित अवधारणाओं को खारिज करने की रवायत शामिल है। इसमें सिद्धांत बनते-बिगड़ते रहते हैं। इसमें हर समय हर बात का या हर समस्या का पूर्ण हल संभव हो यह जरूरी नहीं। यह कोई अल्लादीन का चिराग नहीं है। इसमें यह

कहने की हिम्मत भी है कि 'अभी मुझे नहीं पता'। यह मानसिकता मूल्य व्यवस्था से प्रभावित होती है। किसी समाज में सामाजिक विकास के सूचकांक जैसे गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, स्वास्थ्य आदि इस पर प्रभाव डालते हैं। यह तो हो सकता है कि ये सूचकांक ठीक हों और वैज्ञानिक मानसिकता का ग्राफ ऊंचा न भी हो। लेकिन यह नहीं हो सकता कि ये सूचकांक गिरे हुए हो और उस समाज की मानसिकता (वैज्ञानिक) का ग्राफ ऊपर जाता जाए। इस मानसिकता की एक ओर विशेषता भी है जो इसे दूसरी ज्ञान शाखों से अलग करती है। आप दो विरोधी विश्व दृष्टिकोण को एक साथ यह नहीं कह सकते की दोनों ही सही हैं। यह बात अधिकतर अधिभूतवाद के क्षेत्र में लागू होती है। वैज्ञानिक दृष्टि यह स्पष्ट अंतर करती है और पहचान करती है कि जड़वत रूढ़िवाद कतई स्वीकार्य नहीं है। यह हमेशा प्रगति में बाधक रहा है और रहेगा। अपने इन गुण-धर्म के कारण वैज्ञानिक मानसिकता हर समय समाज की एक नई व्याख्या देती है और इसे प्रगति की ओर ले जाती है।

हमने 1981 के घोषणा पत्र के प्रभाव को भी देखा है। पिछली सदी के सातवें-आठवें दशक में वैज्ञानिक प्रचार प्रसार की अनेक संस्थाओं ने इससे प्रभाव ग्रहण किया। राज्य एवं स्वयंसेवी (वैज्ञानिक) संस्थाओं का निकट आना एक सुखद पक्ष बना। सन 1987 के ज्ञान-विज्ञान जत्थे के रूप में एक अभूतपूर्व कार्य हुआ । 1995 के सूर्य ग्रहण को याद करो। लाखों की तादाद में सोलर फिल्टरों के माध्यम से इसे एक उत्सव की तरह लिया गया। हमारे जैसे रूढ़िवादी समाज के लिए यह कोई छोटी बात नहीं थी। इसके साथ ही एक प्रतिक्रियावादी प्रयोग भी हमने झेला। हम उस समय इस प्रतिक्रियावादी मानसिकता का पूरा अध्ययन नहीं कर पाए। यद्यपि इसका संज्ञान लिया गया था। इसके बाद परिस्थितियों ने बढ़ी करवट बदली और हम एक नए परिवेश (युग) में दाखिल हुए। इसकी अपनी कुछ चारित्रिक विशेषताएं थी।यह राजीव गांधी के आसपास का समय था।

भारत में कंप्यूटर ने प्रवेश किया और नई तकनीक का आगमन हुआ। इस पहले घोषणा पत्र से यह उम्मीद की जा रही थी कि यह देश के लिए द्वितीय नवजागरण सिद्ध होगा। लेकिन बात तो कुछ ओर ही सामने आई। यद्यपि इस पहले घोषणा पत्र ने एक मजबूत वैचारिक वह बौद्धिक धरातल हमें दे दिया। लेकिन हम नए दौर की चुनौतियों का पूर्वाभास नहीं कर पाए। अंतर्राष्ट्रीय परिवेश में भी अनेक बदलाव आए। हम इन्हें पूरी तरह समझने में सफल नहीं रहे। हर क्षेत्र में अवैज्ञानिकता का वातावरण बढ़ने लगा। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया हावी होने लगा। इसकी ताकत का एहसास हमें नहीं था। इसके निजीकरण ने आग में घी का काम किया। इसने इस अवसर को ज्यादा भुनाया। तुलनात्मक रूप में इसने अवैज्ञानिकता को ज्यादा परोसा। इसकी क्षमताएं स्वयं वैज्ञानिक मानसिकता के सामने रोड़ा सिद्ध हुई। अनेक चैनलों से रूढ़िवाद प्रसारित होने लगा।

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सोवियत संघ के विघटन के बाद विश्व का राजनीतिक संतुलन बदल गया। विकसित तथा कम विकासशील देशों में निराशा का वातावरण बना। यह स्वाभाविक भी था। निजीकरण, उदारीकरण, वैश्वीकरण (डंकल प्रकरण) की नीतियों के चलते कमजोर देश नवउपनिवेशवाद का शिकार हुए। क्योंकि खुले बाजार की संकल्पना आ गई। साइबर स्पेस की ताकत बढ़ गई । इन सब ने अतार्किकता को बढ़ाने में भी कोई कसर नहीं छोड़ी। उत्पादन का आर्थिक ढांचा ज्ञान (एक जींस बनकर) की पैदावार की ओर खिसकने लगा। इसने वैज्ञानिक खोजों को प्रभावित किया। अतिविकसित देशों ने इस ज्ञान की कमोडिटी को भी कई तरह से भुनाया। स्वतंत्र खोज, स्वतंत्र न रहकर उनके हितों के अनुरूप ज्यादा होने लगी। पब्लिक का पैसा प्राइवेट फंड के रूप में बरता जाने लगा। ज्ञान कौन सा व किस विषय का और किसके लिए यह निजी संपत्ति (बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए) बनने लगा। जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में हुई खोजो ने आदमी, समाज व प्रकृति के रिश्ते को बदल कर रख दिया। वैश्विक ऊष्णता के रूप में यह ज्यादा मुखर होकर उभरा। जेनेटिक खोजों ने आम आदमी की मानसिकता को शंकित कर दिया। राज्यों के चरित्र भी बदलने लगे। अपने देश में भी वेलफेयर स्टेट की संकल्पना भी बैक मार गई। आम आदमी बड़े शिकारियों (कुछ अदृश्य भी) की खुराक बनने लगे ।

हम जानते हैं कि विज्ञान की एक बड़ी ताकत या क्राइटेरिया है इसकी पड़ताल होने में जो कि प्रयोग द्वारा आसानी से ज्यादातर संभव है। लेकिन सामाजिक प्रयोग इतनी आसानी से हो नहीं सकते। ये थोड़े समय में भी संभव नहीं होते। सामाजिक प्रक्रियाएं ज्यादा जटिल होती हैं। ये किस प्रकार मानवीय व्यवहारों को जन्म देती हैं, इनका विज्ञान व तकनीक से क्या संबंध है, यह समझना बहुत ज्यादा महत्वपूर्ण है। इसलिए इस दौर में अंतर अनुशासनीय **शेष पृष्ठ 25 पर**

ज्ञान विज्ञान की संस्कृति के पक्षधर-महान वैज्ञानिक प्रोफेसर यशपाल

– मुनेश त्यागी

प्रोफेसर यशपाल कमाल की शख्सियत थे। उन्होंने 24 जुलाई 2017 को अंतिम सांस ली थी। वे हमारे सबके प्यारे और आशावादिता से भरपूर इंसान और वैज्ञानिक थे। जैसे वे सर्वज्ञानी हों। वे ज्ञान विज्ञान के सबसे बड़े समर्थक थे। वे सब के लिए विज्ञान की मुहिम के पक्षधर थे।

प्रोफेसर यशपाल सबको मुफ्त शिक्षा, सबको अनिवार्य और आधुनिकतम वैज्ञानिक शिक्षा के पैरोकार थे। वे यूजीसी के चेयरमैन, जेएनयू के वाइस चांसलर थे। उन्हें कई सरकारी सम्मानों से नवाजा गया। वे योजना आयोग के सदस्य रहे। वैज्ञानिक और योजना आयोग के चेयरमैन रहे। क्या कमाल का व्यक्तित्व था उनका। उन्होंने विज्ञान को राजनीति, अर्थशास्त्र और नैतिकता से जोड़ा।

उन्हें पदम भूषण, यूनेस्को के कलिंग सम्मान, मारकोनी इंटरनेशनल फैलोशिप, लाल बहादुर राष्ट्रीय पुरस्कार, इंदिरा गांधी पुरस्कार और पदम विभूषण जैसे अनेक पुरस्कारों से सम्मानित किया गया था। उनकी विज्ञान, गणित, भौतिकी और भूगोल में अच्छी खासी रुचि थी। उन्होंने उन सब का गहन अध्ययन किया और बाद में उच्च शिक्षा के लिए भौतिकी को चुना और दुनिया के महान वैज्ञानिकों की कतार में जा बैठे। एक अकेला आदमी और इतनी सारी उपलब्धियां।

उन्होंने विज्ञान को आम आदमी की भाषा में लाकर जैसे क्रांति ही कर दी हो। उन्होंने जनता में स्वाध्याय की भावना और रुचि पैदा की। वे पाठ को रटने के बजाय, समझने पर विशेष जोर देते थे और यहीं वे दूसरे वैज्ञानिकों से कोसों आगे थे। वे विज्ञान और तकनीक को जन जन तक ले गए। वे तो बिना किसी शक के जनता के वैज्ञानिक थे।

प्रोफेसर यशपाल अपने समय के बहुत ही मशहूर 'टर्निंग प्वाइंट' कार्यक्रम को दूरदर्शन पर ले गए। वे साइंस यानी विज्ञान को जनता के बीच ले गए, सारे देश की जनता के सामने वहां प्रयोग किए, बच्चों और जनता से सवाल आमंत्रित किए और उनके जवाब जनता के सामने, जनता की भाषा में दिए और टी वी को 'ईडियट बॉक्स' नहीं, 'जनता का दोस्त' बना दिया था। टी वी के माध्यम से साइंस को जनता के बीच ले गए और विज्ञान को जनता के बीच लोकप्रिय बनाया था।

प्रोफेसर यशपाल अंधविश्वासों, धर्मांधता, अज्ञानतापूर्ण मान्यताओं और परिपार्टियों के जबरदस्त मुखालिफ थे। टर्निंग प्वाइंट कार्यक्रम में उन्होंने अंधविश्वासों और पाखंडों की पोल खोल दी, जादू टोना-टोटकों का जमकर विरोध किया और जनता को आह्वान किया कि वे भी उनकी मुखालफत करें और अपने जीवन को ज्ञान विज्ञान की रोशनी से सराबोर करें और दुनिया के आधुनिकतम ज्ञानी विज्ञानी इंसान बनें।

टर्निंग प्वाइंट कार्यक्रम में प्रोफेसर यशपाल ने जो कमाल किया, वह था विज्ञान के गूढ़ विषयों को आम जन की भाषा में रोचक बनाकर पेश करना। इसी प्रोग्राम में, करोड़ों लोगों को, प्रोफेसर यशपाल के जरिए, इंद्रधनुष, आकाशगंगा, ग्रहण, राहु केतु और सौर ऊर्जा के रहस्यों को जानने समझने में मदद मिली थी। वे शिक्षा को बिना बोझ महसूस किए पढ़ने और पढ़ाने के प्रवक्ता और बहुत बड़े हांमी थे।

वे शिक्षा को मुनाफाखोरी का धंधा और व्यवसाय बनाये जाने के परम विरोधी थे। शिक्षा को मुनाफाखोरी का धंधा बनाने की सरकार की नीतियों के खिलाफ उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय में एक जनहित याचिका दायर की थी और उस कानून को रद्द करने की मांग की थी। तत्कालीन प्रधान न्यायाधीश आर सी लाहोटी की तीन सदस्यीय पीठ ने उनकी याचिका की दलीलों में काफी दम पाया और कानून को खारिज कर दिया।

वे उदारवादी विचारों के प्रबल समर्थक और दावेदार थे। उनके विचार वैज्ञानिक संस्कृति, वैज्ञानिक सोच, अकादमिक स्वाधीनता और हिसाब किताब देयता यानी जिम्मेदारी से ओतप्रोत थे। उन्हें उच्च शिक्षा के पुनर्जीवन के लिए गठित समिति का चेयरमैन बनाया गया। अपनी रिपोर्ट में विश्वविद्यालय के बारे में उनका कहना था कि विश्वविद्यालय वह स्थान है जहां नए विचारों के बीज अंकुरित होते हैं, जड़े पकड़ते हैं और लंबे तगड़े बनते हैं। यह वह अनोखी जगह है, जहां रचनात्मक दिमाग मिलते हैं, एक दूसरे से संवाद करते हैं और नई वास्तविकता के लिए भविष्य का रास्ता बनाते हैं।

मगर अफसोस कि आज हमारे विश्वविद्यालयों का

गला घोटा जा रहा है, उनमें से कई गुंडागर्दी, हिंसा, जातिवाद और सांप्रदायिकता के गड्ढों में तब्दील कर दिए गए हैं। ऐसे विपरीत समय में प्रोफेसर यशपाल के विचार ही हमारा सही दिशा में और सही मार्गदर्शन कर सकते हैं।

प्रो.यशपाल की सबसे बड़ी खूबी यह थी कि उन्होंने नौजवान पीढ़ी में नई समझ और ज्ञान का चस्का यानी वैज्ञानिक सोच और रुचि पैदा की। सभी विद्यार्थियों से सवाल आमंत्रित करने का आह्वान किया और कहा कि बच्चों को सवाल पूछने की बुनियादी आजादी होनी चाहिए। उनकी दृढ़ मान्यता थी कि जीवन के सभी क्षेत्रों में तार्किकता हो, विवेक पूर्णता हो, ज्ञान विज्ञान से परिपूर्णता हों और सारा जीवन ज्ञान विज्ञान की आधुनिकतम जानकारियों से परिपूर्ण और भरी पुरी हो।

पिछली सदी के अंतिम दशक में एक बार सुबह सुबह सूर्य ग्रहण पड़ा था। पूर्व कार्यक्रम के अनुसार जनता को इस सूर्य ग्रहण की जानकारी देने के लिए वे सुबह सुबह दूरदर्शन पर आ डटे और सूर्य ग्रहण के बारे में जानकारी देने लगे। उन्होंने यहां जोर देकर बताया कि सूर्य ग्रहण में राहु केतु का कोई काम नहीं है। उन्होंने बताया कि अपनी आंखों से देखिए कि वे दोनों यहां कहां है? राहु केतु का सूर्य या चंद्र ग्रहण से कोई लेना देना या रिश्ता नाता नहीं है।

उन्होंने बताया कि जब चांद घूमते घूमते सूर्य और पृथ्वी के बीच में आ जाता है तो वह पृथ्वी के कुछ हिस्से पर सूर्य के प्रकाश को आने से रोक लेता है जिस कारण उस भाग पर अंधेरा छा जाता है, इस स्थिति को सूर्यग्रहण कहते हैं। यह कभी आंशिक हो सकता होता है, तो कभी पूर्ण ग्रहण हो सकता है और सूर्य ग्रहण अमावस्या के दिन ही होता है। इसमें राहू केतू का कोई रोल नहीं है। राहु ओर केतु सब काल्पनिक गपोड है और अज्ञान के अलावा और कुछ भी नहीं है। हां इसे कुछ अंधविश्वासी, धर्मांध, अज्ञानी, स्वार्थी और लालची लोगों का पेटभरू कारनामा जरूर कहा जा सकता है।

दूसरी दफा का वाकया है कि सारे भारत में कुछ ताकतों द्वारा एक सोची-समझी साजिश के तहत और भोली भाली जनता को मूर्ख बनाने के लिए मूर्ति को दूध पिलाये जाने का अभियान चलाया जा रहा था और भक्त गणों की लंबी-लंबी लाइनें लग गई थी, और हर कोई कहने लगा था कि मूर्ति दूध पीने लगी है, मूर्ति दूध पी रही है, तभी प्रोफेसर यशपाल टीवी पर आते हैं और मूर्ति द्वारा दूध पीने का जोरदार विरोध करने लगते हैं और बताते हैं कि जब तक दूध से भरे गिलास या चम्मच को मूर्ति की गीली सतह से नहीं मिलाओगे, तब तक दूध नीचे जा ही नहीं सकता और इसे साइफन और सतह के दबाव का सिद्धांत बताया और सारी दुनिया को यह सब टीवी पर ही करके दिखाया दिया। इस प्रकार प्रोफेसर यशपाल ने इसके दैवीय उपक्रम होने की बात और प्रयासों की हवा ही निकाल दी थी और उन्होंने पूरी दुनिया को प्रत्यक्ष रूप से दिखा दिया था कि पत्थर की कोई भी मूर्ति दूध नहीं पी सकती।

प्रोफेसर यशपाल ने खासतौर से जोर दिया कि हमें बच्चों से खूब बातें करनी चाहिए, उन्हें सवाल पूछने देना चाहिए और उनके सवालों का जवाब जरूर ही देना चाहिए। हम सवाल पूछने की संस्कृति पैदा करें, बच्चों को सवाल पूछने से न रोकें, सवाल पूछना बच्चों का और मनुष्य का जन्मजात और बुनियादी अधिकार होना चाहिए। उनका मानना था कि अर्थशास्त्र, राजनीति शास्त्र, नैतिकता और विज्ञान का संगम होना चाहिए, तभी हमारा समाज और देश, सही मायनों में सही प्रगति और समुचित रूप से विकास कर पाएगा, वरना हम विज्ञान और विकास की दौड़ में पिछड़ जाएंगे।

मगर जब हम आज अपने चारों ओर नजर डालते हैं तो पाते हैं कि यहां तो चारों और अंधविश्वास और पाखंड के पहाड़ उगा दिए गए हैं, मानव को श्रद्धेय नही, श्रध्दांध और अंधविश्वासी बना दिया गया है, उसे ज्ञान विज्ञान से कोसों दूर कर दिया गया है और यहां अंधविश्वासों और अवैज्ञानिकता का घनघोर अंधेरा छा गया है और जैसे सारी की सारी व्यवस्था ही इसी जनविरोधी और ज्ञान विज्ञान विरोधी उपक्रम में लगी हुई है और जनता के बड़े हिस्से को विज्ञान विरोधी और ज्ञान विरोधी उपक्रम में बनाए रखना चाहती है।

आज प्रो. यशपाल को सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि हम उनके बताए रास्ते पर चलें, जो ज्ञान विज्ञान, तार्किकता और विवेक से परिपूर्ण हो। ज्ञान विज्ञान और तकनीक के संगम से ही हमारा देश और समाज इस अज्ञानता, अंधविश्वास, पाखंडों, धर्मांधता और अविवेकशीलता की वैतरणी को पार कर सकता है और तभी हम अपने संवैधानिक अधिकार और कर्तव्यों का अनुसरण और पालन कर सकते हैं, और एक नई वैज्ञानिक संस्कृति और सोच विचार वाले आधुनिक समाज का निर्माण कर सकते हैं, तभी हम एक विकसित देश, विकसित समाज और विकसित मनुष्य होने के अधिकारी कहला सकते हैं।

हम प्रोफेसर यशपाल के बहुत आभारी हैं। हमने प्रोफेसर यशपाल के टेलीविजन पर आयोजित प्रोग्राम टर्निंग

प्वाइंट के बारे में अपनी बेटी, बेटे और पत्नी को देखने के लिए प्रेरित किया। वे धीरे–धीरे प्रोफेसर यशपाल का टर्निंग पॉइंट प्रोग्राम देखने लगे और धीरे–धीरे उनकी ज्ञान विज्ञान की बातों से इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने तमाम तरह के अंधविश्वासों और पाखंडों में विश्वास करना छोड़ दिया और वे ज्ञान विज्ञान की संस्कृति में रच बस गए। वे आज भी प्रोफेसर यशपाल के अमूल्य योगदान का जिक्र करते रहते हैं और अपने को प्रोफेसर यशपाल का ऋणी मानते हैं।

यहीं पर बड़े अफसोस की बात है कि जैसे हमारी सरकार और समाज के बड़े हिस्से ने प्रोफेसर यशपाल जैसे वैज्ञानिकों के बारे में बातचीत करनी छोड़ दी है, उनके बारे में, उनकी उपलब्धियों के बारे में जनता को बताना और जानकारी देना या उनके बारे में कोई कार्यक्रम करना ही छोड़ दिया है। यह सरकार और समस्त सांप्रदायिक ताकतें यह सब जान बूझ कर कर रही हैं। वे नहीं चाहते कि हमारी जनता ज्ञान विज्ञान की संस्कृति में रचे बसे। उनमें से अधिकांश का मानना है कि हमारी जनता अंधविश्वास और पाखंडों में ही लिप्त रहे, ताकि जनता उनकी जन विरोधी, देश विरोधी, संविधान विरोधी और वैज्ञानिक संस्कृति विरोधी नीतियों के बारे में न जान पाएं।

आज यह हम सब की सबसे बड़ी जिम्मेदारी बन गई है कि भारत के संविधानिक मूल्यों को और ज्ञान विज्ञान की संस्कृति को, आगे ले जाने के लिए प्रोफेसर यशपाल के मिशन को आगे बढ़ाएं, उनके जन्मदिन और पुण्यतिथि पर और विज्ञान दिवस पर विज्ञान को आगे बढ़ाने वाले और धर्मांधता, अंधविश्वास और पाखंडों को खत्म करने के कार्यक्रम आयोजित करें और जनता को आधुनिकतम ज्ञान विज्ञान की संस्कृति से अवगत करायें।

प्रो. यशपाल भारत के ज्ञान विज्ञान के अभियान की सबसे बड़ी हस्ती थे। 1990 में उन्हें अपनी इसी प्रतिबद्धता के कारण जन विज्ञान समिति का अध्यक्ष बनाया गया था ताकि भारत के गांव गांव शहर शहर में ज्ञान विज्ञान के प्रचार प्रसार को बढ़ावा मिल सके। उनके इसी विराट व्यक्तित्व के कारण प्रो. यशपाल को भारत में शिक्षा की स्थिति सुधारने के लिए यशपाल कमेटी का अध्यक्ष बनाया गया था। आज भारत के ज्ञान विज्ञान प्रचार प्रसार से जुड़े लोगों की यह सबसे बड़ी जिम्मेदारी बन गई है कि वे प्रो. यशपाल की ज्ञान विज्ञान के प्रचार–प्रसार की विरासत को जनता के बीच ले जाएं। वर्तमान सरकारी संस्थान इस काम को नहीं करेंगे। यह काम भी जनता के ज्ञानी वैज्ञानी प्रबुद्ध प्रतिनिधियों को आगे ले जाना होगा।

पृष्ठ 20 का शेष युवक पांचवी और अंतिम चौकी में तय समय पर 'माता' के घर था। युवक के साथ तर्कशील सोसाइटी की टीम थी और पुलिस थी। 'माता' ने युवक से माफ़ कर देने की गुहार लगाई लेकिन युवक को अपनी नाक से खींची गयी लकीरे याद थीं। चौकी पर ताला जड़ दिया गया, 'माता' अब जेल में थी। रिश्तेदार आंटी मौके से फरार हो गयी थी।

– वीरेंदर भाटिया

पृष्ठ 22 का शेष अप्रोच की ज्यादा जरूरत आन पड़ी। आप देख सकते हैं कि हमारे यहां अनाज का उत्पादन भी बढ़ गया, लेकिन एक गरीब की थाली का भोजन भी कम हो गया। स्वास्थ्य के क्षेत्र में प्रति व्यक्ति औसत आयु तो बढ़ गई लेकिन गरीब लोग कम उम्र में दम तोड़ने लगे। कहने का तात्पर्य यह है कि वैज्ञानिक मानसिकता का कार्य सामाजिक अंधविश्वासों को दूर करने से कहीं ज्यादा आगे बढ़ने का हो गया।

पहले घोषणा पत्र में कहां गया था कि विज्ञान विधि न केवल प्रकृति विज्ञान की खोजों के लिए अपितु सामाजिक विज्ञानों में भी कारगर होती है। अब वैज्ञानिक मानसिकता की बात इस रूप में प्रबल होने लगी कि कौन समाज किस रूप में स्वयं को रूपांतरित करने के लिए कितने ज्यादा सामाजिक प्रयोग करता है और इनमें विज्ञान विधि को अपनाता है। इसमें आधुनिक शिक्षा पद्धति की महती भूमिका आ खड़ी हुई। इन सभी आयामों को (चुनौतियों) को समेटने के लिए सन 2011 में पालमपुर (हिमाचल प्रदेश) में दूसरा वैज्ञानिक मानसिकता घोषणा पत्र तैयार हुआ। इसमें कुछ रणनीतिक बातों पर ज्यादा फोकस था जिनके द्वारा 1981 के घोषणा पत्र की भावना की पुर्न–स्थापना की जा सके और इसे आगे बढ़ाया जा सके। हमारे यहां पहला दौर वैज्ञानिक मानसिकता की बौद्धिक व्याख्या का रहा, बीच में एक दौर विज्ञान की जय (वाजपेई के आसपास)का भी रहा और वर्तमान दौर तो इसे खारिज करने पर तुला हुआ है। यह एक नए प्रकार की स्थिति है। यह निर्णय की घड़ी है– Science or Silence.

70152 60646

शिक्षा में सांझेदारी

– तैयब हुसैन

शिक्षा से संबंधित एक लेख 'शिक्षा की परीक्षा में फेल का खेल' मैंने में लिखा था जो शिक्षा विमर्श (जयपुर), जनज्वार (रांची) और चिंतन शैली (जमशेदपुर) में कुछेक फेर बदल के साथ प्रकाशित हुआ। उस लेख में मेरा मानना था कि 'नई शिक्षा नीति' नाम देकर शिक्षा को बाजार के हवाले करने का उपक्रम हुआ और शिक्षा विभाग का नया नाम 'मानव संसाधन' कर दिया गया। जाहिर है कि कमोबेश मैकाले की शिक्षा पद्धति पर ही आधारित भारत की शिक्षा नीति को बद से बदतर की ओर एक कदम ओर ढकेल दिया गया। इस तरह उससे मानव कल्याण की जगह आर्थिक नफा नुकसान की बात सोची जाने लगी।

इधर कॉरपोरेट स्वार्थों के पक्ष में शिक्षा ने दो पग और बढ़ाए हैं या बढ़ाने वाले हैं। इसमें पहला कदम है 'शिक्षा में सांझेदारी'।

प्रधानमंत्री ने 15 अगस्त, 2007 को देश के नाम अपने अभिभाषण में 6000 नए स्कूलों की स्थापना की घोषणा की थी। केन्द्र सरकार ने इस आधार पर 2500 स्कूल सार्वजनिक निजी साझेदारी मॉडल पर खोलने संबंधी निर्देश राज्य सरकारों और केन्द्र शासित प्रदेशों को भेज दिए थे।

ये विद्यालय केन्द्रीय विद्यालय की तरह बनाए। इनमें 6 से 12 कक्षा तक की पढ़ाई होगी और इनका संचालन राज्य सरकारें स्वीकृत पंजीकृत संस्थाओं के माध्यम से करेगी। इसी तरह यह भी कहा गया है कि केन्द्रीय विद्यालयों के नियम कानूनों के तहत 2500 विद्यालय खोले जाएं जिनका संचालन सार्वजनिक निजी साझेदारी के अंतर्गत निजी एजेंसी करेंगी।

स्पष्ट है कि राज्य सरकारें निजी साझेदारी को स्कूल खोलने के लिए आमंत्रित करेंगी और इससे बड़े व्यापारी और कॉरपोरेट वर्ग के लिए निजीकरण की दिशा में एक कदम बढ़ाने और शिक्षा व्यवस्था में सम्मानजनक तरीके से पैठ बनाने का मौका मिलेगा।

ये स्कूल जिलों के उन खंडों के मुख्यालयों में खोले जाएंगे जो शैक्षिक रूप से पिछड़े नहीं हैं। निजी संस्थाओं के लिए मुनाफा कमाने का यह एक बेहतर मौका है क्योंकि यहां जरूरत की सारी सुविधाएं उन्हें आसानी से मुहैया हो सकेंगी। मसलन, राज्य सरकार निजी संस्थाओं को जमीन उपलब्ध करवा सकती है। अफसरशाही की अपार शक्तियां उन्हें मिल सकती हैं, सार्वजनिक क्षेत्र की जमीन नई सेवा के नाम पर निजी हाथों में भी जा सकेगी।

संक्षेप में सीधे तौर पर यह निजीकरण की ओर बढ़ता कदम है और 1968, 1986 और 1992 की शिक्षा नीतियों के प्रति जवाबदेही से पल्ला झाड़ना है जिनमें नजदीकी स्कूलों के माध्यम से सामाजिक न्याय की स्थापना और समता के लिए समान स्कूली व्यवस्था की बात की गई थी।

शिक्षा के क्षेत्र में निजीकरण की शुरूआत उच्च शिक्षा के स्तर पर हो चुकी है जहां कारोबारियों को लाभ अधिक और जवाबदेही कम है। इस नई नीति से तो पूरी शिक्षा ही निजी हाथों में चली जाएगी, सार्वजनिक क्षेत्र का कोई अस्तित्व नहीं रहेगा। यह एक ऐसा अराजक दृश्य होगा जिसमें शिक्षा की उत्कृष्टता और निकृष्टता के स्थापित और प्रचलित मापदंड ही तिरोहित हो जाएंगे।

जाने माने शिक्षाविद् अनिल सदगोपाल ने अपने एक इंटरव्यू में सीधे कहा है कि "भारत सरकार जिसे सार्वजनिक निजी 'साझेदारी' कह रही है, उसे मेरे द्वारा प्रस्तुत राजनीतिक अर्थव्यवस्था के विवेचन और दृष्टांत के मद्देनजर साझेदारी नहीं वरन मेहनतकश जनका के श्रम और जन संसाधन की सार्वजनिक निजी लूट या फिर जनता के खिलाफ सार्वजनिक निजी साजिश कहना ज्यादा सही होगा।" (शिक्षा विमर्श)

मैं आगे लगभग उन्हीं की बात साभार उन्हीं के शब्दों में रखना चाहूंगा क्योंकि उद्देश्य बिना बाधा उसे विज्ञ पाठकों तक गंभीरता से विचारार्थ सम्प्रेषित करना है। सदगोपाल कहते हैं कि यह कोई नई बात नहीं है। भारत में आजादी के बाद से ही मिश्रित अर्थव्यवस्था का सिद्धांत लागू किया गया जिसे राज्य समर्थित पूंजीवाद कहना ज्यादा सही होगा। निजी पूंजी ने हमेशा ही देश की नीतियों को इस तरह से अपने पक्ष में बदलवाया कि अधिक से अधिक मुनाफा कमाया जा सके। एक वह जमाना था कि मुख्यमंत्रियों से मुलाकात करने के लिए देशी-विदेशी बड़े-बड़े पूंजीपतियों को इतंजार करना पड़ता था। अब यह युग है कि बिल गेट्स की भारत यात्रा के दौरान उनके होटल के कमरे के बाहर मुख्यमंत्रियों की कतार लग जाती है।

'साझेदारी' केवल वित्तीय आधार पर नहीं होती है। उसका राजनीतिक आधार भी होता है। इस संदर्भ में मैकॉले की शिक्षा नीति में ईस्ट इंडिया कंपनी के कारोबार को बढ़ाने और ब्रिटिश सत्ता को स्थापित करने का जो आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक एजेंडा निहित था उसनें और इसाई मिशनरी स्कूलों के बीच एक अघोषित सामंजस्य था।

भारत में शिक्षा और शिक्षालयों के निजीकरण का इतिहास देखें तो पहला दौर 1970 के दशक में शुरू हुआ और दूसरा दौर 1990 के दशक में। सत्तर के दशक तक मुट्ठी भर निजी स्कूलों की बात छोड़ दें तो सभी के बच्चे आमतौर पर एक स्कूल में पढ़ते थे। लगभग इसी समय अंग्रेजी माध्यम की शिक्षा की तलाश में मध्यम वर्ग ने सरकारी स्कूल से पलायन शुरू किया।

आजादी के बाद शिक्षित वर्ग में उम्मीद बनी थी कि अब भारत में देश की विभिन्न भाषाओं को न्यायपालिका, नौकरशाही, उद्योग, व्यापार, उच्च और तकनीकी शिक्षा, शोध, नियोजन और विभिन्न पेशों में यथोचित स्थान मिलेगा। लेकिन सत्तर का दशक आने तक यह स्पष्ट हो गया कि भारत का उच्चवर्गीय और उच्चवर्णीय शासक वर्ग अंग्रेजी के वर्चस्व में लेशमात्र भी कमी नहीं आने देगा।

इसलिए अंग्रेजी माध्यम और बढ़ती हुई प्रतिस्पर्धा पर टिके हुए कैरियरों की तलाश में यह पलायन अस्सी के दशक तक महापलायन का रूप ले चुका था। मध्यम वर्घ की मांग पूरा करने के लिए बाजार के नियम के अनुसार निजी स्कूल कुकुरमुत्ते की तरह खुलने लगे। इस महापलायन का सीधा असर सरकारी स्कूलों की गुणवत्ता पर पड़ा क्योंकि समाज के जिस तबके की पहुंच राजनीतिक गलियारों तक थी और जिसके पास आवाज उठाने की ताकत थी, उसके सरकारी स्कूलों में नहीं रहने से गिरावट अवश्यंभावी थी।

दूसरा दौर 1991 में नई आर्थिक नीति के साथ शुरू हुआ। भारत सरकार के सामने विश्व बैंक और अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष ने कर्ज और अनुदान के लिए शर्त रखी। इस शर्त का नाम था 'संरचनात्मक समायोजन कार्यक्रम' इसके तहत सरकार के लिए यह अनिवार्य हो गया कि वह आने वाले सालों में शिक्षा और सेहत जैसे सामाजिक क्षेत्र में खर्च घटाए। विडंबना यह है कि जिस महाशक्ति के प्रभुत्व में विश्व बैंक काम करता है उस अमरीका में सार्वजनिक धन से चलने वाली उम्दा गुणवत्ता की मजबूत सरकारी स्कूल व्यवस्था का एक लंबा इतिहास है। वही देश जब अपने ठीक विपरीत शर्त भारत पर थोपता है तो यह सवाल उठना स्वाभाविक है कि विश्व बैंक की असली मंशा क्या है? स्पष्ट है कि जब भारत के सरकारी स्कूलों में धन उपलब्ध नहीं कराया जाएगा तो शिक्षा की गुणवत्ता में गिरावट आएगी और गरीब बच्चों के भी मां-बाप अपने बच्चों को सरकारी स्कूलों से निकालेंगे। फिर उसका विकल्प तलाशेंगे।

सत्तर के दशक में मध्य वर्ग के द्वारा पलायन करने पर महंगे निजी स्कूलों का बाजार खुला था। ठीक उसी तरह नब्बे के दशक में गरीब बच्चों के लिए भी कम फीस वाले घटिया गुणवत्ता के स्कूलों का बाजार शुरू हुया। यह विश्व बैंक पहले से ही जानता था।

संरचनात्मक समायोजन की शर्त का नतीजा यह निकला कि 1991-92 से लेकर 2005-06 तक, बीच के सिर्फ दो साल को छोड़कर, सकल राष्ट्रीय उत्पाद के फीसद के रूप में शिक्षा पर खर्च 4 फीसद से लगातार घटता गया। यह 3.5 फीसद पर पहुंच गया। उधर हुआ यह कि 2004 में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार के गठन के बाद शिक्षा पर 2 फीसद उपकर लगाकर हजारों करोड़ की अतिरिक्त राशि बटोरी गई और सर्वशिक्षा अभियान का लगभग 35 फीसद धन विश्व बैंक, डी एफ आई डी और अन्य अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों से आया। साफ है कि सरकार शिक्षा के प्रति अपनी संविधानिक जवाबदेही से लगातार पीछे हटती गई। 'राज्य' की भूमिका घटाने और बाजार की भूमिका बढ़ाने की यह परिघटना नवउदारवाद के सैद्धांतिक खाके का अनिवार्य नतीजा है जिसका जिक्र 'वाशिंगटन कंसेंसस' में है।

'राज्य' वही नीतियां बनाता है जो उसके राजनीतिक चरित्र और वर्गहितों के अनुकूल हो। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि आपके सुझाव कितने तार्किक हैं, कितने अनुभवजनित हैं या कितने जनहित में हैं। नवउदारवादी युग में तो 'राज्य' ने तर्क, अनुभव और जनहित की बात सुननी ही लगभग छोड़ दी है।

स्कूल वाउचर प्रणाली

स्कूल वाउचर का विचार सबसे पहले 1955 में नवउदारवाद के अमरीकी गुरू और अर्थशास्त्र में नोबल पुरस्कार विजेता (1976) प्रोफेसर मिल्टन फ्रीडमैन ने दिया। इस विचार की जड़े प्रोफेसर फ्रीडमैन के नेतृत्व में विकसित नवउदारवादी अर्थशास्त्र के लिए जाने माने 'शिकागो स्कूल' के आर्थिक दर्शन में हैं जो वित्तीय एकाधिकारी पूंजी पर टिके तथाकथित

'मुक्त' बाजार की होड़ पर आंख मूंदकर आस्था रखने और 'राज्य' की जनहित की भूमिका को सीमित करने वाला दर्शन है।

स्कूल वाउचर बच्चों के मां-बाप (अभिभावक) को सरकार द्वारा दिया गया एक तयशुदा कीमत का कूपन है जिसको लेकर वे अपने मनपसंद स्कूल (सरकारी और निजी दोनों) में अपने बच्चो को भर्ती करा सकते हैं और वह स्कूल सरकार को कूपन देकर उसे भुना सकता है। इस विचार के समर्थकों के अनुसार वाउचर के कारण स्कूल चुनने का अधिकार मां बाप को मिल जाता है जिसके चलते उनका सशक्तिकरण होता है। स्कूल के लिए पैसा तब भी सरकार से ही आएगा। लेकिन संचालन का काम सरकार नहीं करेगी।

केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड (केब) ने 2004-05 में शिक्षा पर विचार करने के लिए सात समितियों का गठन किया था। इनमें पांच स्कूली शिक्षा पर और दो उच्च और तकनीकी शिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर थी। इनमें शिक्षा के वित्तीय मसलों पर कई दूरगामी महत्व की अनुशंसाएं थी, गौरतलब है कि इनमें एक भी समिति ने स्कूल वाउचर का नाम तक नहीं लिया। सात समितियों में कुल मिलाकर देश के जाने माने लगभग 100 शिक्षाविदों और बुद्धिजीवियों को वाउचर का विचार सिफारिश के लायक लगा ही नहीं। इसके बावजूद सिर्फ डेढ़ साल बाद दिसंबर 2006 में ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के लिए योजना आयोग के 'एप्रोच पेपर' में इसका जिक्र आ गया।

अनुमान है कि भारत में वाउचर की पैरवी वही एन जी ओ करते हैं जिनका वित्तपोषण और अन्य प्रकार का समर्थन अमरीका और दूसरे ताकतवर पूंजवादी देशों में नवउदारवादी विचारधारा का प्रचार प्रसार करने वाली कई अंतर्राष्ट्रीय एजेंसियां करती हैं।

इसलिए पहले तो यही सवाल उठता है कि क्या नवउदारवाद के चलते भारत का लोकतंत्र इसी तरह कदम दर कदम कमजोर किया जाएगा? जाहिर है कि यह सवाल तो भारत की संप्रभुता से भी जुड़ा है।

स्कूल वाउचर का सबसे बड़ा प्रयोग लातीनी अमरीका के दो देशों चिली और कोलंबिया में हुआ है। अमरीका में मिलवॉकी (विस्कॉन्सिन राज्य) और क्लीवलैंड (ओहायो) इसके बहुचर्चित उदाहरण हैं।

इसके अनुभव हैं कि निजी स्कूलों में विद्यार्थियों के गणित और भाषा (स्पैनिश) के टेस्ट स्कोर सरकारी स्कूलों की तुलना में थोड़ा बेहतर थे। लेकिन कई शोधों से पता चला कि इस अंतर का असली कारण है कि वाउचरों के बावजूद भर्ती के समय निजी स्कूल भेदभाव करते हैं। उन बच्चों को चुनते हैं जिनके मां बाप अधिक शिक्षित होते हैं या जिनका सामाजिक आर्थिक दर्जा ऊंचा है। भर्ती के समय ये बेहतर स्कूल और खासकर निजी स्कूल मां-बाप का साक्षात्कार करते हैं, प्रवेश परीक्षा लेते हैं और बच्चों पर ऊंचा टेस्ट स्कोर बरकरार रखने के लिए भारी दबाव बनाते हैं। साफ है कि वाउचर भी गरीब बच्चों को बेहतर स्कूल चुनने का हक नहीं दिला सका क्योंकि साक्षात्कार का इस्तेमाल इस श्रेणी के बच्चों को बाहर रखने के लिए किया गया। गरीब बच्चों को बाहर रखने के निजी स्कूलों ने जैसे जटिल दाखिला प्रक्रिया, महंगी यूनिफॉर्म जैसे तरीकों का भी इस्तेमाल किया।

चिली के अध्ययन से तो एक चौंकाने वाला निष्कर्ष यह सामने आया कि दरअसल वाउचर वाले निजी स्कूल सरकारी स्कूलों के मुकाबले बेहतर नहीं थे।

भारत में महज एक एन जी ओ और चंद नवउदारवादी पैरवीकारों के दबाव में आकर जिस हड़बड़ी में वाउचर कार्यक्रम शुरू होने जा रहे हैं, उससे हमारी स्कूली व्यवस्था पर दूरगामी नकारात्मक असर पड़ना तय है। ठीक उसी तरह जैसे डीपीईपी का नब्बे के दशक में और सर्वशिक्षा अभियान का वर्तमान दशक में पड़ा है। लेकिन नवउदारवादी नीति निर्माताओं को इसकी क्यों चिंता होगी। उनके बच्चे तो उन महंगे स्कूलों में पढ़ रहे होंगे जो वाउचर प्रणाली के बाहर रहेंगे।

ऐसे में एक ही रास्ता है और वह रास्ता एक लंबे जन आंदोलन का है। अकेले शिक्षा के मुद्दे पर अलग से आंदोलन खड़ा करना मुमकिन नहीं दिखता क्योंकि जनता के लिए इस वक्त अपने अस्तित्व की लड़ाई अधिक प्राथमिकता रखती है। इसलिए यह जरूरी है कि शिक्षा की लड़ाई को जल, जंगल, जमीन, जीविका के साथ जोड़कर देश में चल रहे सही आंदोलनों के साथ जोड़ा जाए। शिक्षा में सार्वजनिक निजी सांझेदारी के प्रतिरोध की लड़ाई तभी शिक्षा की सर्वांगीण लड़ाई का हिस्सा बन सकती है।

(स्रोत : किताब ''सरकार की नीयत और शिक्षा की नियति'', फिलहात पुस्तक श्रृंखला)

''तर्कशील पथ'' पढ़े, ''तर्कशील '' बने।

अंगप्रदान न करने के पीछे धार्मिक मिथ्या

– रोहित

भारत में अंगप्रदान जितनी संख्या में हो रहे हैं उस से ज्यादा देश में इस की मांग है। यानी, भारत में प्रति 10 लाख आबादी में अंगप्रदान डोनर एक से भी कम है। यह आंकड़ा दुनियाभर के कई विकसित देशों के मुकाबले बेहद शर्मनाक है। खासतौर पर अमेरिका और स्पेन जैसे देशों की तुलना में जहां डोनरों की दर दुनिया में सब से ऊंची है और जहां प्रति 10 लाख लोगों में 40 अंगप्रदान डोनर हैं।

भारत में इस तरह की स्थिति के चलते जीवित रहने के लिए प्रदान के अंगों की जरूरत वाले कई मरीजों की मौत हो जाती है। भारत अंगप्रदान करने वाले देशों के सब से निचले पायदानों में कहीं पर ठहरता है।

हम बात कर रहे हैं उस भारत की जहां गर्व 'दानदक्षिणा' करने पर तो किया जाता है पर यह गर्व अंगों या जरूरतमंदों को प्रदान किए खून का नहीं। आमतौर पर लोग इसे शिक्षा की कमी से जोड़ देते हैं, लेकिन खातेपीते लोग सब से ज्यादा इस भ्रम को पाले रहते हैं।

हमें यही तो सिखाया जाता है कि अपने मरने पर शरीर में किसी प्रकार की काटपीट न होने दें क्योंकि पुनर्जन्म की व्याख्या बांची जाती है। इसी का डर दिखा कर भक्तों से पैसे काटे जाते हैं।

बात इस जन्म के यहीं खत्म होने की होती, तो लोग मरने के बाद की कहानी को न सोचते, लेकिन यहां धर्म ही सिखाता है कि इस जन्म के बाद एक ओर जन्म है, और फिर एक ओर जन्म है। तब भला कोई कैसे अपने अंगों को शरीर से हटवा सकता है? क्या उसे यह डर नहीं सताएगा कि अगर इस जन्म में अंगप्रदान कर दिए तो अगले जन्म में बेअंग पैदा न हो जाएं।

डाक्टर और प्रत्यारोपण के विशेषज्ञों ने अंगों के डोनरों की कमी के लिए कुछ वजहों की शिनाख्त की हैं। उन में अंगदान के बारे में जागरूकता की कमी, प्रैक्टिस से जुड़ी गलत मान्यताएं और बुनियादी ढांचे से जुड़े मुद्दे भी शामिल हैं।

मान्यताएं ऐसी हैं कि अच्छाभला आदमी अपना सिर धुनना शुरू कर दे। क्योंकि यही मान्यताएं हमें गरीब लोगों को लड्डू दान करना पसंद कराती हैं। हम निर्जीव मूर्तियों में लाखों का पैसा फेंक आते हैं लेकिन जीवित प्राणियों में एक इंसान नहीं देखते।

यही कारण है कि हर साल, सड़क परिवहन के आंकड़ों के मुताबिक, भारत में करीब 1,50,000 लोग सड़कों पर मारे जाते हैं। यानी, लगभग 410 से ज्यादा लोग प्रतिदिन दम तोड़ देते हैं। समस्या यह कि इन मृतकों के परिजनों से बात करे कौन? डाक्टर खुद सकुचाते हैं, कहीं उन के परिजन लाठीडंडों से पीटने न लग जाएं।

मार्च में प्रधानमंत्री ने अपने मासिक रेडियो प्रसारण में जनता से अंगदान का विकल्प चुनने की अपील की थी। उन्होंने कहा कि उन की सरकार एक नीति पर काम कर रही है जो अंगदान की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करेगी और उसे सरल बनाएगी।

लेकिन समस्या यह कि देश में अगर अंगदान करने के इच्छुक लोग बढ़ भी जाएं तो सभी अस्पतालों में अंग प्रत्यारोपण से जुड़ी तमाम प्रक्रियाओं के लिए जरूरी साजोसामान या उपकरण मौजूद नहीं हैं। भारत में सिर्फ 250 अस्पताल ही नैशनल औऱ्गन एंड टिश्यू ट्रांसप्लांट औऱ्गनाइजेशन (नोटो) से पंजीकृत हैं। यह संगठन देश के अंग प्रत्यारोपण कार्यक्रम का समन्वय करता है।

यानी, देश में प्रत्येक 43 लाख नागरिकों के लिए तमाम सुविधाओं और उपकरणों वाला सिर्फ एक अस्पताल है। भारत के देहाती इलाकों में तो ट्रांसप्लांट सैंटर कमोबेश हैं भी नहीं।

समस्या यह कि ताजा राष्ट्रीय स्वास्थ्य रूपरेखा के मुताबिक, भारत उन देशों में शामिल है जहां सार्वजनिक स्वास्थ्य पर सब से कम पैसा खर्च किया जाता है। प्रधानमंत्री चाहे जितनी चाहे बातें कर लें, अगर स्वास्थय क्षेत्र में पैसा नहीं लगाएंगे तो ये बातें मात्र बातें ही साबित होंगी।

समझने वाली बात यह है कि भारत में अंग प्रत्यारोपण जीवित डोनरों के जरिए ही संभव हो पाता है यानी अपने जीवित रहते ही अपना अंग प्रदान करने पर राजी होना, जैसे कि किडनी। आज विज्ञान ने तरक्की कर ली है। समझने की जरूरत है कि यह तभी संभव होगा जब यह दोमुंहापन छोड़ा जाए और सरकार को स्वास्थ्य क्षेत्र में काम करने पर मजबूर किया जाए।

साभार– 'सरिता' पत्रिका (जून 2024)

भारत के पक्षी विज्ञानी- डा. सलीम अली

डॉ. सलीम मोइजुद्दीन अब्दुल अली एक भारतीय पक्षी विज्ञानी, वन्यजीव संरक्षणवादी और प्रकृतिवादी थे। डॉ. अली देश के पहले ऐसे पक्षी विज्ञानी थे जिन्होंने सम्पूर्ण भारत में व्यवस्थित रूप से पक्षियों का सर्वेक्षण किया और पक्षियों पर ढेर सारे लेख और किताबें लिखीं। उनके द्वारा लिखी पुस्तकों ने भारत में पक्षी-विज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उनके कार्यों के मद्देनजर उन्हें 'भारत का बर्डमैन' के रूप में भी जाना जाता है। उनके कार्यों और योगदान के लिए भारत सरकार ने उन्हें सन 1958 में पदम भूषण और सन 1976 में देश के दूसरे सर्वोच्च नागरिक सम्मान पदम विभूषण से सम्मानित किया। सन 1947 के बाद वे 'बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी' के सबसे प्रधान व्यक्ति बन गए और 'भरतपुर पक्षी अभयारण्य' के गठन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने 'साइलेंट वैली नेशनल पार्क' को बर्बादी से बचाने में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया।

प्रारंभिक जीवन

सलीम अली का जन्म बॉम्बे (अब मुंबई) के एक सुलेमानी बोहरा मुस्लिम परिवार में 12 नवम्बर 1896 को हुआ। वे अपने माता-पिता के सबसे छोटे और नौंवे बच्चे थे। जब वे एक साल के थे तब उनके पिता मोइजुद्दीन की मौत हो गई और जब वे तीन साल के हुए तब उनकी माता ज़ीनत-उन-निस्सा की भी मृत्यु हो गई। सलीम और उनके भाई-बहनों का देख-रेख उनके मामा अमिरुद्दीन तैयाबजी और चाची हमिदा द्वारा मुंबई की खेतवाड़ी इलाके में हुआ।

बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी (बी एन एच एस) के सचिव डबल्यू.एस. मिलार्ड ने सलीम के अन्दर पक्षियों के प्रति जिज्ञासा बढ़ाई और बालक सलीम को पक्षियों के अध्ययन के लिए उत्साहित किया जिसके स्वरुप सलीम ने गंभीर अध्ययन करना शुरू किया। मिलार्ड ने सोसायटी में संग्रहीत सभी पक्षियों को सलीम को दिखाना प्रारंभ किया और पक्षियों के संग्रहण के लिए प्रोत्साहित भी किया। उन्होंने सलीम को कुछ किताबें भी दी जिसमें 'कॉमन बर्ड्स ऑफ मुंबई' भी शामिल थी। मिल्लार्ड ने सलीम को पक्षियों के छाल निकालने और संरक्षण में प्रशिक्षित करने की पेशकश भी की। उन्होंने ही युवा सलीम की मुलाकात नोर्मन बॉयड किनियर से करवाई, जो कि बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी में प्रथम पेड क्यूरेटर थे।

सलीम की प्रारंभिक रूचि शिकार से संबंधित किताबों पर थी जो बाद में स्पोर्ट-शूटिंग की दिशा में आ गई जिसमें उनके पालक-पिता अमिरुद्दीन ने उन्हें काफी प्रोत्साहित भी किया। उनके आस-पड़ोस में अक्सर शूटिंग प्रतियोगिता का आयोजन होता था।

बर्डमैन ऑफ़ इंडिया

डॉ सलीम अली ने अपना पूरा जीवन पक्षियों को समझने के लिए समर्पित कर दिया। ऐसा माना जाता है कि सलीम मोइजुद्दीन अब्दुल अली परिंदों की ज़ुबान समझते थे। उन्होंने पक्षियों के अध्ययन को आम जनमानस से जोड़ा और कई पक्षी विहारों की निर्माण में अग्रणी भूमिका निभाई।

उन्होंने पक्षियों की अलग-अलग प्रजातियों के बारे में अध्ययन के लिए देश के कई भागों और जंगलों में भ्रमण किया। कुमाऊँ के तराई क्षेत्र से डॉ. अली ने बया पक्षी की एक ऐसी प्रजाति ढूंढ़ निकाली जो लुप्त घोषित हो चुकी थी। साइबेरियाई सारसों की एक-एक आदत की उनको अच्छी तरह पहचान थी। उन्होंने ही अपने अध्ययन के माध्यम से बताया था कि साइबेरियन सारस मांसाहारी नहीं होते, बल्कि वे पानी के किनारे पर जमी काई खाते हैं। वे पक्षियों के साथ दोस्ताना व्यवहार करते थे और उन्हें बिना कष्ट पहुंचाए पकड़ने के 100 से भी ज़्यादा तरीक़े उनके पास थे। पक्षियों को पकड़ने के लिए डॉ. सलीम अली ने प्रसिद्ध 'गोंग एंड फायर' व 'डेक्कन विधि' की खोज की जिन्हें आज भी पक्षी विज्ञानियों द्वारा प्रयोग किया जाता है।

जर्मनी के 'बर्लिन विश्वविद्यालय' में उन्होंने प्रसिद्ध जीव वैज्ञानिक इरविन स्ट्रेसमैन के देख-रेख में काम किया। उसके बाद सन 1930 में वे भारत लौट आये और फिर पक्षियों पर और तेजी से कार्य प्रारंभ किया। देश की आज़ादी के बाद डॉ. सलीम अली 'बांबे नेचुरल हिस्ट्री सोसायटी' (बीएनएसच) के प्रमुख लोगों में रहे। भरतपुर पक्षी विहार की स्थापना में उनकी प्रमुख भूमिका रही।

डॉ सलीम अली ने प्रकृति विज्ञान और पक्षी विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इस दिशा में उनके कार्यों के मद्देनजर उन्हें कई प्रतिष्ठित सम्मान **शेष पृष्ठ 31 पर**

सिक्का दीवार पर चिपक गया...कैसे?

टिकेश कुमार

मुझे याद है जब मैं लगभग 11 साल का था। एक रिश्तेदार के साथ उनके घर गया था, उधर से ही हम लोग छत्तीसगढ़ के धमतरी के गंगरेल बांध घूमने गए। डेम से आते समय धमतरी चले गए। वहां बहुत भीड़ थी, लोग एक-दूसरे को धक्का-मुक्की कर रहे थे। जैसे-तैसे हम लोगों ने भी प्रवेश किया। बहुत से लोग दीवारों पर सिक्का चिपकाने से सभी मनोकामनाएं पूरी होती है ऐसा मानते हैं। दीवार पर एक चौकोन और गड्ढों पर बहुत से सिक्के चिपके हुए थे और दीवार का रंग भी हल्का काला हो गया था। कुछ लोग बड़ी श्रद्धा से अपनी जेब से सिक्का निकालकर सावधानी से दीवार पर चिपका रहे थे।

मेरे साथ गए लोग भी एक-एक करके सिक्का चिपकाने लगे। किसी ने एक रुपया, तो किसी ने पांच रुपए का सिक्का चिपकाकर गर्व महसूस कर रहे थे। तो कोई निराश थे, क्योंकि सिक्का उसके हाथ से दीवार पर चिपका नहीं था। जिसके हाथ से सिक्का दीवार पर चिपक गया वे व्यक्ति अपने आप को शुभ, पुण्यात्मा, भाग्यशाली और मनोकामना सिद्धि व्यक्ति मान रहे थे। वहीं जिसके हाथों से सिक्का नहीं चिपका वे खुद को अशुभ, अभागे और मनखोटी समझने लगे।

सभी सिक्के पुजारी कर लेता है अंदर

लोग कहते हैं कि अगर सिक्का दीवार पर चिपकता है या नहीं चिपकता है, दोनों स्थिति में सिक्के को उठाकर जेब में नहीं डालना है, चाहे कितने बड़े सिक्के हो। अगर बच्चे उस सिक्के को उठाता है तो उसे मना करना होता है। इसे कोई भी नहीं उठा सकता। अब आप सोच रहे होंगे कि इस प्रकार तो बहुत से सिक्के हर रोज उसी स्थान पर इक्कठे हो गए होंगे, लेकिन ऐसा नहीं है। उस सिक्के को कुछ समय के बाद पुजारी अंदर कर लेता है।

क्या यह सच में भाग्य मापने का यंत्र है?

मैं घर पहुंच कर बहुत दिनों से इस के बारे में सोचता था, क्या यह सच में भाग्य मापने का यंत्र है? किसी के भाग्य सिक्का से कैसे पता चलेगा? फिर सोचता था आखिर सिक्का दीवार पर क्यों चिपका! घर की दीवारों में भी सिक्का चिपकाकर देखता था, चिपक ही नहीं रहा था। एक दिन अचानक से दरवाजे से लगी दीवार पर एक सिक्का चिपक गया। मैं बहुत खुश हुआ। इस खुशी को पूरे घर में सभी को बांटा। सभी लोग आश्चर्य हो गए।

तेल की वजह से चिपकता है सिक्का

बहुत सोचने के बाद पता चला यह तेल का कमाल है। मेरे दादा जी हर रोज सोने से पहले फल्ली तेल को अपने हाथ पैर में चिकचिक से लगाने के बाद सो जाते थे और कुछ ही समय के बाद उठकर हाथ से दीवार का सहारा लेकर दरवाजे खोलते थे। हाथ का तेल दीवार पर लग जाता था। बहुत दिनों से दीवार पर तेल और धूल लगने से उसमें थोड़ा चिपचिपा आ गया था। इसीलिए सिक्का दीवार पर चिपक जाता था।

तेल के कारण सी चिपचिपाहट

इसी प्रकार दीवार पर भी दीया जलाने का तेल समय-समय में लगाया जाता है, जिससे चिपचिपाहट बनी रहे, इसी कारण सिक्का दीवार पर चिपक जाता था। जल्दबाजी या चिपचिपाहट न होने की जगह के कारण कुछ सिक्के नहीं चिपक पाते थे। और लोग इसे श्रद्धा मान लेते थे, बहुत बड़ी शक्ति मान लेते थे।

अज्ञानतावश लोग चमत्कार पर करते हैं विश्वास

आज भी लोग अज्ञानतावश चमत्कार पर विश्वास कर लेते हैं। जब तक उद्दीपक के कारण (वस्तु कैसे कार्य करता है) समझ नहीं आएगा तब तक चमत्कार लगेगा। इसीलिए साथियों आंख बंद करके विश्वास नहीं करें और अंधविश्वास जैसी बीमारी से मुक्ति पाएं।

– अध्यक्ष, एंटी सुपरस्टीशन ऑर्गेनाइजेशन

पृष्ठ 30 का शेष दिए गए। अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय और दिल्ली विश्वविद्यालय ने उन्हें डॉक्टरेट की मानद उपाधि दी।

डॉ सलीम अली भारत में एक 'पक्षी अध्ययन व शोध केन्द्र' की स्थापना करना चाहते थे। इनके महत्वपूर्ण कार्यों और प्रकृति विज्ञान और पक्षी विज्ञान के क्षेत्र में अहम् योगदान के मद्देनजर 'बॉम्बे नैचुरल हिस्ट्री सोसाइटी' और 'पर्यावरण एवं वन मंत्रालय' द्वारा कोयम्बटूर के निकट 'अनाइकट्टी' नामक स्थान पर 'सलीम अली पक्षीविज्ञान एवं प्राकृतिक इतिहास केन्द्र' स्थापित किया गया।

20 जून 1987 को उनकी मृत्यु हो गई,पक्षी अध्ययन के महत्वपूर्ण कार्य के लिए उन्हें सदा याद किया जाता रहेगा।

कथित चमत्कारी उपचार

डा. दिनेश मिश्र
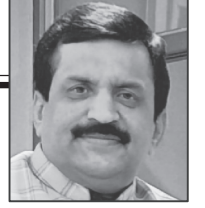
महासमुन्द जिले के ग्राम बूटीपाली में निसंतान दंपत्ति को संतान दिलाने के नाम पर गुमराह करने, भ्रम में डालने, अंधविश्वास फैलाने का मामला सामने आया है जो प्राकृतिक एवम चिकित्सा विज्ञान के भी पूर्णत विपरीत एवम ग्रामीण जनों को धोखे में डालने वाला है। ऐसे व्यक्ति की जॉच कर सख्त कार्यवाही होनी चाहिए। डॉ. मिश्र ने जिलाधीश एवम अन्य प्रशासनिक अधिकारियों को पत्र लिख कर कार्यवाही की मांग की है।

ग्राम बूटी पाली महासमुंद में एक व्यक्ति, उम्र करीब 40 वर्ष, शिक्षा पांचवी, कुछ दिनों से अपना दरबार लगा रहा है और लोगों को नीबू खिलाकर झाड़ फूंक कर निसंतान दंपत्ति को संतान दिलाने, बीमारियों को ठीक करने के दावे कर रहा है।

उक्त व्यक्ति के जो दावे हैं जो चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से अप्रामाणिक एवं झूठे हैं, जिन दावों की चर्चा उसने खुद वीडियो में भी की है यह वीडियो भी संलग्न है, फिर भी उन दावो की जानकारी निम्न अनुसार है:

1. उक्त बाबा का दावा है कि उसके द्वारा खिलाए गए प्रसाद नींबू खिलाने के 15 मिनट में निसंतान दंपतियों में गर्भधारण हो जाता है।

2. उस व्यक्ति के दरबार में जो भी महिला जाती है, जिसका कथित गर्भधारण होता है यदि वह सोनोग्राफी कराया जाएगा तो गर्भ नहीं दिखाई देगा, जबकि चिकित्सा विज्ञान में लेकिन अगर किसी भी व्यक्ति की सोनोग्राफी की जाती है तो उसके शरीर में जो भी तत्व, अंग हैं उसकी जानकारी निश्चित रूप से होती है।

3. यह बाबा लोगों को गुमराह कर रहा है कि इसके इलाज से चार से पांच महीने में भी तीन चार किलो वजन का स्वस्थ बच्चा पैदा हो सकता है जबकि अगर कोई बच्चा 9 माह के समय के पहले पैदा होता है, यहां तक छठवें सातवें महीने में भी पैदा होता है तो वह प्री मेच्योर डिलीवरी मानी जाती है जिसमें बच्चों को हाई रिस्क होता है उसे संक्रमण का खतरा होता है।

4. उक्त बाबा का यह भी दावा है कि उसके आशीर्वाद से कोई भी उम्र दराज महिला भी गर्भवती हो सकती है, इसमें उम्र का कोई बंधन नहीं है 50 वर्ष की उम्र से ऊपर की महिला भी गर्भवती हो सकती है जिसका मासिक धर्म भले बंद हो चुका हो।

5. उक्त बाबा का एक ओर दावा है कि उसके आशीर्वाद से गर्भ धारण भी होगा लेकिन मासिक धर्म भी चलता रहेगा जो कि बिल्कुल ही दोनों प्रसूति विज्ञान के विपरीत बातें हैं जब किसी महिला गर्भवती होती है तो उसकी मासिक धर्म बंद होता है और उसके शरीर में गर्भ पलता बढ़ता है और मासिक धर्म दुबारा तभी शुरू होता है जब बच्चा पैदा हो जाता है।

6. बाबा का दावा है कि वह चार महीने और उससे भी छोटे बच्चों को चला सकता है।

7. कथित रुप से गर्भधारण के बाद भ्रूण के पेट में मूवमेंट होने की बात भी फर्जी है। प्रारम्भ में बच्चे में हृदय, फेफड़ा, मस्तिष्क विकसित ही नहीं होता है इसलिए उसके हिलने जुलने और मूवमेंट का दावा बिल्कुल ही गलत है।

8. यह व्यक्ति दावा करता है कि लड़के पैदा होने के लिए अलग दवा दे तो लड़के पैदा होते हैं, कुछ लोगों को वह बिना किसी जांच के भी कह चुका है कि वह न केवल गर्भावस्था बल्कि उनका डिलीवरी का समय और दिन भी बता सकता है।

9. उक्त बाबा ने कुछ महिलाओं को गर्भ में जुड़वा बच्चे होने का दावा किया है जो बिना सही जांच, सोनोग्राफी के नहीं बताया जा सकता।

10. उक्त कथित बाबा ने उसने कुछ अन्य बीमारियों के बारे में भी झाड़ फूंक करके ठीक करने की दावे किए हैं।

उक्त बाबा के इस प्रकार के भ्रामक दावों से न केवल हजारों की संख्या में ग्रामीण जमा हो रहे हैं बल्कि वह भ्रमित हो रहे हैं और संतान की आस में उसके पास आते हैं और वह उन्हें उनमें भ्रम एवं अंधविश्वास फैला रहा है।

इंडियन ड्रग एंड मेजिक रेमेडी एक्ट 1954 की दृष्टि में इस प्रकार संतान हीनता एवं अन्य बीमारियों के तथाकथित चमत्कारिक उपचार का जो दावा है जो यह पूरी तरह से गलत, अवैज्ञानिक है।

कुछ स्थानों में ऐसे ही अन्य बाबाओं के द्वारा चमत्कारिक दावों के प्रचार, भीड़ जमा होने से भगदड़ व दुर्घटनाएं होती रहती है और जान माल की हानि होती है। महासमुंद के जिलाधीश, पुलिस अधीक्षक, एवम मुख्य चिकित्साधिकारी को पत्र लिख कर उपरोक्त मामले की जांच करके आवश्यक कार्रवाई करने की मांग की गई है ताकि ग्रामीण जन अंधविश्वास और धोखाधड़ी से बचाए जा सके।

अध्यक्ष, अंध श्रद्धा निर्मूलन समिति. 98274 00859

अनपढ़

जे.पी.एस. जौली

एक दिन एक बहुत ही दुखी व्यक्ति बाबा झांसा राम के पास आया। उसने हाथ जोड़ कर विनती करते हुए कहा: बाबा मैं पढ़ा-लिखा हूं लेकिन पिछले 7-8 साल से कोई भी नौकरी नहीं मिल रही। आप ही बताओ कि मैं क्या करूँ? बाबा ने पूछा कि कहाँ तक पढ़ाई की है। बाबा मैं B.A. पास हूँ। बाबा ने जवाब देते हुए कहा, कि दो अक्षर पढ़े, वो भी उल्टे, तो नौकरी कहाँ से मिलेगी? पास बैठे चेले ने धीरे से कहा, महाराज यह कालेज़ की डिग्री होती है। बाबा एक दम चौकन्ने होते हुए बोले तुम एक B.A. ओर कर लो, तुम्हारे सारे कष्ट दूर हो जाऐंगें। इसके बाद तुम्हे किसी नौकरी की जरूरत नहीं पड़ेगी। बल्कि बड़ी-बड़ी नौकरियाँ करने वाले भी अपनी समस्याओं का हल पाने के लिए तुम्हारे पास आएँगे। बाबा मैं कुछ समझा नहीं। चेले ने स्पष्ट करते हुए कहा कि बाबा कह रहे है कि एक B.A. तुम्हारे पास है उसके साथ एक ओर B.A. लगा लो और B.A. बन जाओ। अब यह बताओ कि यह सारी जादुई विद्या सीखने के लिए दक्षिणा क्या दोगे? उस व्यक्ति ने कहा बाबा, मैंने न तो शास्त्र पढ़े हैं और न ही मुझे धर्मग्रथों का पूर्ण रूप से ज्ञान है, ऐसे में मैं बाबा कैसे बन सकता हूँ। चेले ने उस व्यक्ति से कहा कि बाबा बनने के लिए न तो किसी पढ़ाई की और न ही किसी डिग्री की जरूरत होती है। तुम बस जल्दी से दान-दक्षिणा का इंतजाम करो। बाकी बाबा अपने आशीर्वाद से सब ठीक कर देंगे।

चेले ने उस मजबूर व्यक्ति को अलग ले जाकर बाबागिरी के कुछ रहस्यमय गुर बताते हुए कहा कि हम लोग इंजेक्शन वाली सुई से नींबू के अंदर लाल रंग भर देते हैं। फिर जब कोई अपना दुखड़ा ले कर बाबा के पास आता है तो हम उसके सामने वही नींबू काट कर दिखाते है। वो उसे खून समझ कर डर जाता है इसी तरह से हम कुछ अण्डों को 'सिरके' वाले पानी में थोड़ी देर के लिए डूबो देते हैं। जब अण्डे थोड़े नर्म हो जाते हैं तो हम उसमें कुछ सुइयों डाल देते हैं। कुछ समय के बाद हम लोगों के सामने वो सुईया निकाल कर कहते है, हम ने तुम्हारे सारे दुख-दर्द दूर कर दिये। उस व्यक्ति ने कहा कि ऐसा करना तो सरासर धोखा है। बाबा ने उसे बड़े ही प्यार से समझाते हुए कहा कि देश के नेता जनता का माल खा रहे हैं, सरकारी अफसर रिश्वत खा रहे हैं। हर आदमी दूसरों को धोखा दे रहा है इसलिए बेकार की बातें मत करो और जल्दी से बाबा बनने की तैयारी करो। बड़े ही प्यार और सहज भाव से बाबा ने यह सारी बातें उस व्यक्ति को समझाई। बाबा के व्यवहार और उनकी मुस्कराहट से प्रभावित हो कर उस व्यक्ति ने कहा कि जब से मैं यहाँ आया हूँ कुछ न कुछ उल्टा-सीधा बोले जा रहा हूँ। लेकिन आप मेरी हर बात का जवाब फिर भी हंसकर दे रहे हैं। बाबा आपको कभी गुस्सा नहीं आता, आपकी इस सहनशीलता का राज क्या है? इससे पहले की बाबा कुछ बोलते उनके चेले ने जवाब दिया कि बाबा बनने से पहले इन्होंने 25 साल तक साड़ियों के शोरूम में नौकरी की थी। फिर एक दिन अचानक इनकी बीवी को इनके साथ काम करने वाली एक लड़की के प्रेम-प्रसंग के बारे में मालूम हो गया। उसके बाद इनकी बीवी ने जम कर इनकी धुनाई की। बस उसी दिन से यह संसार की मोह-माया को त्याग कर बाबा बन गये। यह सब कुछ करने का फायदा यह हुआ कि अब यह हर किस्म की जिम्मेदारी से मुक्त रह कर ऐशो-आराम की जिंदगी गुज़ार रहे हैं।

अब इस व्यक्ति ने हैरान होते हुए कहा, कि आजकल सभी लोग पढ़े-लिखे और समझदार हैं। ऐसे में वो क्या हमारी इस तरह की बचकाना हरकतों को देख कर हमारे झाँसे में आ पायेंगें। बाबा ने कहा कि तुम किस तरह के पढ़े-लिखे लोगों की बात कर रहे हो। हमारे देश में आज भी लाखों लोग सारा दिन अपने मोबइल फोन और 'वट्सअप' पर कोई न कोई धार्मिक संदेश इधर-उधर भेज कर मुफ्त में फोन का बैलेंस बढ़ने और चमत्कार की उम्मीद करते रहते है। साथ ही यह मूर्ख लोग दूसरों को चेतावनी भी देते रहते हैं कि अगर इस संदेश को आगे नहीं भेजा तो तुम्हारे साथ कोई बहुत ही अप्रिय घटना हो सकती है इस तरह के अंधविश्वासी लोगों को तुम पढ़ा-लिखा समझते हो। इन लोगों ने बेशक कॉलेज से बड़ी-बड़ी डिग्रियाँ हासिल कर ली हों लेकिन यह असल जिंदगी में आज भी बिल्कुल अनपढ़ और गंवार हैं। बेटा, इन लोगों की इन्हीं बेवकूफियों के कारण हम जैसे बाबाओं का कारोबार हमेशा से चलता आ रहा है और आगे भी इसी तरह से चमकता रहेगा। अब इस परेशान व्यक्ति को समझ आने लगा था कि कोई भी बाबा न तो कोई नौकरी, न ही **शेष पृष्ठ 34 पर**

विपक्ष ने अंध श्रद्धा पर कानून बनाने की मांग की

जनसत्ता ब्यूरो, नई दिल्ली

राज्यसभा ने बुधवार को उत्तर प्रदेश के हाथरस में एक सत्संग के दौरान मची भगदड़ से लोगों की मौत पर दुख जताया और मृतकों को श्रद्धांजलि दी। इसके साथ ही उच्च सदन ने भविष्य में ऐसी घटनाओं पर अंकुश लगाने के भी लिए एक ठोस तंत्र बनाए जाने की प्रतिबद्धता भी जताई। विपक्ष के नेता मल्लिकार्जुन खरगे ने इस अवसर पर महाराष्ट्र और कर्नाटक के अंधविश्वास विरोधी और काला जादू (रोकथाम) अधिनियम की तर्ज पर देश में एक कानून बनाने की मांग की।

राज्यसभा की कार्यवाही आरंभ होने के कुछ देर बाद सभापति जगदीप धनखड़ ने हाथरस की इस घटना का उल्लेख किया और कहा कि इसमें श्रद्धालुओं की मौत पीड़ादायक और दुर्भाग्यपूर्ण है। सदन ने पीड़ित परिवारों के प्रति संवेदना जताई और घायलों के जल्द स्वस्थ होने की कामना भी की। सदन में सदस्यों ने कुछ देर मौन रखकर पीड़ितों को श्रद्धांजलि अर्पित की। सभापति ने बताया कि प्रशासन की ओर से वहां आवश्यक कार्यवाही की जा रही है और मामले की जांच के आदेश भी दे दिए गए हैं।

धनखड़ ने कहा कि हाथरस जैसी घटनाओं को टाला जा सकता है। इस प्रकार के जमावड़े के दौरान कैसी व्यवस्था की जानी चाहिए, इस बारे में सदन को व्यवस्थित तरीके से चर्चा करने की जरूरत है। उन्होंने ऐसे आयोजनों को लेकर स्थानीय प्रशासन को संवेदनशील बनाए जाने पर भी बल दिया। खरगे ने कहा कि बहुत सी जगहों पर जो ऐसे हादसे हो रहे हैं, उसके पीछे अंधविश्वास मूल कारण होता है और इसके लिए कोई कानून नहीं है। उन्होंने कहा कि इसके लिए एक देशव्यापी कानून बनाए जाने की जरूरत है। खरगे ने कहा कि महाराष्ट्र में अंध श्रद्धा को लेकर एक ऐसा कानून बना है और ऐसा ही एक कानून कर्नाटक में भी है। उन्होंने कहा कि इसी लाइन पर आप कानून बनाइए। पाबंदी लगाइए। सच्चे लोगों को आने दो।

जांच के लिए विशेषज्ञ समिति की नियुक्ति की मांग को लेकर सुप्रीम कोर्ट में याचिका दायर

नई दिल्ली

उत्तर प्रदेश के हाथरस में मची भगदड़ की घटना की जांच के लिए शीर्ष अदालत के किसी सेवानिवृत्त न्यायाधीश की निगरानी में पांच सदस्यीय विशेषज्ञ समिति गठित करने का अनुरोध करते हुए उच्चतम न्यायालय में एक याचिका दायर की गई।

अधिवक्ता विशाल तिवारी द्वारा दायर याचिका में इस घटना पर स्थिति रपट प्रस्तुत करने और लापरवाही बरतने के लिए अधिकारियों और अन्य लोगों के खिलाफ कानूनी कार्रवाई शुरू करने का उत्तर प्रदेश सरकार को निर्देश दिए जाने का अनुरोध किया गया है। याचिका में सभी राज्य सरकारों को भी यह निर्देश देने का अनुरोध किया गया है कि वे भगदड़ की इस प्रकार की घटनाओं से निपटने के लिए खंड/तहसील से लेकर जिला स्तर तक राज्य में उपलब्ध चिकित्सा सुविधाओं की स्थिति की जानकारी दें। याचिका में अनुरोध किया गया है कि अदालत किसी भी धार्मिक या ऐसे आयोजनों के दौरान भगदड़ या अन्य घटनाओं को रोकने के लिए जनता की सुरक्षा के मद्देनजर दिशानिर्देश जारी करें।

(3 जुलाई 2024)

पृष्ठ 33 का शेष व्यापार करते है। न ही यह लोग पढ़ाई–लिखाई के बारे में कुछ ज्यादा जानते है। इन सभी बातों के बावजूद भी सिर्फ हम लोगों की अज्ञानता और भावनाओं के साथ खिलवाड़ करते हुए यह लाखों रुपये आसानी से ऐंठ लेते हैं। हम लोग यह क्यों नहीं समझ पाते कि जो बाबा अपने परिवार को ठीक से नहीं संभाल पाते वो दूसरों को दुनियाँ जहाँन की सुख–सुविधाएँ कैसे दे सकते हैं। इन लोगों का एक ही ध्येय होता है कि किस तरह से आम लोगों को अपना शिकार बना कर अधिक से अधिक लूटा जाए। आज जरूरत है कि हम अपने देश से अज्ञानता और गरीबी मिटाने के लिए सभी को जागरूक करने की कोशिश करें। वरना इस तरह के बाबा सीधे–साधे लोगों को धर्म के नाम पर ब्लैकमेल करते ही रहेंगे।

ठगी बाबाओं की इस मक्कारी को समझने के बाद यही अहसास हो रहा है कि हमारे पास बेशक ज़माने भर की कितनी भी पढ़ाई–लिखाई क्यों न हो लेकिन जब तक हम अपनी कमजोरियों एवं धार्मिक मानसिकता को ठीक से नहीं समझेंगें उस समय तक हम अनपढ़ ही कहलाएँगे।

अपशकुन

हमारे घर की दीवार में
घोंसला बना रहती है
एक काली चिड़िया
कई पीढ़ियां बीत गई
बीस वर्ष से देखता हूं।
सुबह चीं-चीं करती है
संगीतमयी स्वर भरती हैं।
उधर दरवाजे के ऊपर
बना घोंसला कबूतर परिवार
गुटर गूं का करता गुंजार।
एक दिन एक पाखंडी ने
मुझे राह में रोका
और टोका।
कबूतर का घर में घोंसला बनाना
बुरा बताया।
मुझे समझाया।
बोला इसे हटा दो
यहां से गिरा दो।
मैंने नहीं में सिर हिलाया
वह चिल्लाया।
अरे! ये अपशकुन है।
घर में रुकता नहीं धन है
ये ढूंढ़ता स्थान निर्जन है।
फिर मैंने चिड़िया की बात बताई
उसने उस पर भी आपत्ति जताई।
बोले आप धर्म का मर्म नहीं जानते
आप नास्तिक हो
भगवान को नहीं मानते।
मैंने कहा मैं भगवान नहीं मानता
पर किसी जीव का घर नहीं उजाड़ता।
आप रोज धर्म नाम पर नफ़रत फैलाते हो।
हिंसा करवाते हो।
काल्पनिक डर दिखाते हो।
श्रीमान! जीवों को तो बख्श दो
इनका घर क्यों उजड़वाते हो।
वह मेरी बात सुनकर हैरान था
पूरा परेशान था।
लेकिन मैंने उसे बिठाया
पानी पिलाया
समझाया
कि हमारे और तुम्हारे में
यही फर्क है
तुम्हारे पास धर्म, कल्पना और भगवान है।
हमारे पास तर्क है
ज्ञान है, विज्ञान है।
मैं न डरूंगा, न डराऊंगा।
आप कितना भी कहो
मैं कबूतर का घोंसला नहीं गिराऊंगा।

– डॉ. फूल सिंह लुहानी

००००

कर्ज़दार

मैं उन्हें नहीं जानता
शायद वे भी नावाकिफ़ हों
मुझसे।

लेकिन जब मैं सो रहा होता हूँ
तब वे हज़ारों हाथ
मेरी ज़िंदगी को
बेहतर बनाने के लिए
दिन रात एक किए रहते हैं।

मेरे सपनों की दुनिया के बाहर
एक बहुत ही बड़ी दुनिया में
ऐसे भी लोग हैं
जिन्हें मेरी भूख की फिक्र है
हालाँकि
उनमें से कइयों को
दो वक्त की रोटी नसीब नहीं होती।

न जाने कितने लोग हैं
जो मेरी किताबों के लिए

काग़ज़ और स्याही
बना रहे होते हैं
कितने छपाई और
ज़िल्दसाज़ी में लगे होते हैं।

मेरे तन को ढँकने के लिए
कई पीढ़ियाँ
कपास के फूल बनकर
काली मिट्टी में दफ़न हो गई हैं।

जब मैं एअर कंडीशन्ड कमरे में
या पंखे के नीचे
या ख़ुशनुमा छाँह में
सुस्ता रहा होता हूँ

ठीक उसी समय
मुझ जैसे इन्सानों की भीड़
पसीना बनकर
तपते रेगिस्तान में
जज़्ब हो रही होती है।

मेरा एक–एक पल
हज़ारों हज़ारों हाथों की
मेहनत का नतीजा है
और मैं उनमें से
किसी एक को भी
नहीं जानता।

और मज़े की बात यह
कि वे भी मुझे नहीं जानते
फिर भी
मेरी राहों को रौशन करने
अपना लहू जलाते हैं
और ख़ुश हो जाते हैं।

कहते हैं
तीर्थयात्रा पर
निकलने से पहले
हमें अपने ऊपर के
सभी कर्ज़ चुका देने चाहिए
वरना हमारी इबादत
क़ुबूल नहीं होती।

मैं सिर्फ़ इतना
जानना चाहता हूँ कि
इस धरती पर
क्या कोई एक भी शख़्स
कोई एक भी
ऐसा हुआ है
जिसने इन सबके कर्ज़
उतार दिए हों।

जिनके कर्ज़ को
मैं हर पल
पल–पल
महसूस करता हूँ
और मेरा क़द
छोटा और छोटा
होता चला जाता है।

– हूबनाथ

गीत

गीत लिखता हूँ मैं
वैचारिक कूपमण्डूता से लोगों को बाहर लाने को।
गीत लिखता हूँ मैं
दास्ता से पीड़ित लोगो में स्वाभिमान जगाने को ।
गीत लिखता हूँ मैं
अपने अधिकारों से वंचित लोगों को उठ खड़ा करने को ।
गीत लिखता हूँ मैं
ज्ञान मंदिरों से कतराते लोगों को शिक्षा का अर्थ समझाने को।
गीत लिखता हूँ मैं
संगठित रहने का मौजूदा दौर में महत्व बतलाने को।
गीत लिखता हूँ मैं
लोगों के संघर्ष को सही दिशा बोध देने को।
गीत लिखता हूँ मैं
अपने सामाजिक दायित्वों को पूर्ण करने को।
गीत लिखता हूँ मैं
गीत लिखता हूँ मैं

जय प्रकाश वाल्मीकि
85598 41747

कोचिंग गुरु

–मुकेश भारद्वाज

दिल्ली का मुखरजी नगर। साधारन सा सलवार–सूट पहने एक स्त्री यहां के पार्क के बेंच पर बैठी दिख जाती है। वह स्त्री सालों पहले जोशीली युवा के रूप में मुखर्जी नगर आई थी। उसका एक ही सपना था, आई ए एस बनने का। पूरी मेहनत के साथ सारे मौके बीत जाने तक उसे सफलता नहीं मिल पाई। 'सिविल सेवा नहीं तो कुछ भी नहीं' वाली मन–स्थिति ने उसका मानसिक संतुलन बिगाड़ दिया। उम्र और मौके खत्म होने के बाद भी यह आज तक मुखर्जी नगर से बाहर नहीं निकल पाई। वह यहीं–कहीं भटकती मिल रही है।

कुछ समय पहले अखबार में छपी इस रपट को पढ़ने के बाद असली जिंदगी पर बनी फिल्म का कोई शीर्षक सूझेगा तो उसे बारहवीं फेल नहीं, 'यू पी एस सी फेल' का नाम देना सही लगेगा। राजेन्द्र नगर तो प्रतिनिधि प्रतीक है, देश के कई हिस्सों में विद्यार्थियों के ऐसे उपनिवेश बन चुके हैं। जो लाखों में से चंद विद्यार्थीयों के पास होने का उत्सव नहीं बल्कि 99.9 फीसद से अधिक विद्यार्थीयों के नाकाम रहने का मातवी मंच है। कोचिंग साम्राज्य के ये उपनिवेश इन हजारों 'यू पी एस सी फेल' लोगों के सपने की कब्रगाह है जो सरकारी अफसर बनने में नकाम होने के बाद कहीं के नहीं रहे। मुश्किल यह है कि बारहवीं फेल होने के बाद आप प्रेरक गुरू तो बन सकते हैं लेकिन 'यू पी एस सी फेल' होने के बाद आपके अस्तित्व को शून्य करार दिया जाता है।

सिविल सेवा जिसे सरकार व प्रशासन की अहम इकाई माना जाता है आज उसे बाजार की सबसे बड़ी इकाई बना दिया गया है। हिन्दुस्तान के हर छोर के गाँव कस्बे से युवा अपने नजदीकी महांनगरों में उन सपनों के उपनिवेश किसी राजेन्द्र नगर में पहुंच रहे हैं। सरकारी सेवाओं के लिए सीटें तों सीमित हो रहे हैं, लेकिन इसके लिए दिखाए जा रहे सपनों का असीम विस्तार हो रहा है। ग्रामीण इलाके के लोग अपने खेत बेच कर बच्चों को सिविल सेवा की तैयारी करवाने वाले कोचिंग में पढ़ने के लिए भेज रहे हैं।

स्कूल, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय जैसे शब्द सुनते ही आपकी आँखों के सामने किसे हरे–भरे परिसर की तस्वीर उभरती है। वह खुला, बड़ा परिसर जनता के आयकर से चलता है, जिसे सरकारी कहते हैं। लेकिन, बाज़ार में कोचिंग जैसा उत्पाद बना कर ऐसे शिक्षा संस्थानों को नाकाम करने की कोशिश की जा रही है जहां हर वर्ग से आए विद्यार्थी को लगता है कि उसके सपने जिस भी दिशा की हकीकत बनें कबूल है।

ऐसी ही 'सरकारी' छवियों की हत्या कर कोचिंग संस्थानों से हमारे विद्यार्थियों को तंग जगह वाले कोचिंग केंद्रों में भेजा। युवाओं के सपनो पर इस कोचिंग बाज़ार की समान्तर सत्ता स्थापित हो गई। शिक्षा की शास्त्रीय परिभाषा को खत्म कर कोचिंग गुरुओं ने 'यूट्यूब यूनिवर्सिटी' की स्थापना की। अब कोचिंग गुरू 'रील मास्टर' भी हो गए। हर किसी के फोन के सोशल मीडिया मंच पर ये व्यक्तित्व विकास के इतने गुर देते हैं कि एक विद्यार्थी के लिए एकल जीवन में अपने व्यक्तित्व को इतना विस्तार करना तो असंभव ही है।

कोचिंग गुरूओं की प्रेरक रील के असर से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का इतना विकास होता है कि वे कोचिंग संस्थानों में प्रवेश के वक्त यह भी नहीं पूछते कि इनके संस्थान में आग से बचने या किसी तरह की आपात स्थिति से निपटने के क्या इंतजाम है? पिछले साल जब सिविल सेवा की परीक्षा की तैयारी करवाने वाली कोचिंग की एक इमारत में आग लग गई तो वहां से कूद कर जान बचाते विद्यार्थियों का वीभत्स दृश्य भी आगे उन्हें ऐसे सवाल पूछने की प्रेरणा नहीं दे सका कि इतनी फीस लेने के बाद आप हमें किस तरह के सुरक्षा इंतजामात दे रहे हैं।

सिविल सेवा परीक्षा में साक्षात्कार को अहम हिस्सा माना जााता है। कोचिग के बाहर दिव्य गुरुओं के द्वारा छद्म साक्षात्कारों को इंटरनेट पर वायरल करवाते हैं। कोचिंग बाजार ने साक्षात्कारों से पहले विद्यार्थियों को छद्म बनाया है। सरकारी स्कूलों, विद्यार्थियों की साख खत्म करवाई कि वह पढ़ाई नहीं होती है। डाक्टरी, इंजीनियरिंग की प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी करवाने वाले कोचिंग संचालक अभिभावकों को पहली सलाह विद्यार्थियों को 'डमी' बनाने की देते हैं। ये पहला सपना अभिभावकों की आंखों में पिरोते हैं और इन सपनों की 'डमी' विद्यार्थियों की आंखों में आती है। यानी–ग्यारहवीं–बारहवीं के लिए अभिभावक बच्चों को किसी ऐसे स्कूल में

डाल दे जहां बच्चों के लिए कक्षा में उपस्थिति अनिवार्य न हो। बच्चे सालों भर कोचिंग में प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर 'डमी स्कूल' से ग्यारहवीं-वारहवीं के इम्तहान भर देते हैं।

कोचिंग संस्थानों की इस दिव्य कीर्ति के पीछे परिवार से लेकर सरकार तक है। सरकार शिक्षा पर बजट कम करती है और इससे बेफिक्र अभिभावक 'डमी' स्कूलों और कोचिंग संस्थानों को चुन लेते हैं। जिन विद्यार्थियों ने यह देखा कि कैसे उनके अभिभावकों ने स्कूल की जगह कोचिंग को चुना, सरकारी की जगह निजी को चुना, उनका आगे 'सरकारी' को लेकर रवैया कैसा होगा? सरकारी स्कूलों के मलवे पर महंगे कोचिंग में पड़ा देश का ज्यादातर युवा सरकारी अधिकारी बनना चाहता है उससे बड़ी बिडंबना ओर क्या होगी?

मंहगे कोचिंग में पढ़े युवा जब दिव्य गुरुओं के वायरल छद्म साक्षात्कार में देश के अंतिम व्यक्ति के लिए काम करने की बात करते हैं, महात्मा गांधी, मदर टेरेसा को अपना आदर्श बताते हैं तो वही से आगे के लिए एक छद्म सरकारी अफसर भी बनता दिखता है। जो आगे चलकर हर 'सरकारी' को खारिज करने की योजनाएं बनाएगा। उनके दिव्य गुरू भी रील में इतिहास और हिंदी पढ़ाने के बाद यह बताने लगते हैं कि पीतल के बर्तन में खाना बनाने का क्या फायदा होता है।

आई ए एस बनाने का दावा करने वाला इन दिव्य गुरुओं के कोचिंग केंद्र इन कथित बाबाओं के आश्रमों और डेरों से कम बड़ी मुसीबत नहीं है जो जनता की धार्मिक भावनाओं का दोहन करते हैं। इंटरनैंट के जरिए इन्होंने अपनी कीर्ति इस तरह फैलाई है कि अब हर अभिभावक किसी भी कीमत पर इन दिव्य गुरुओं के पास अपने बच्चों को भेजना चाहता है।

जब ऐसे ही किसी कीर्तिमान वाले केंद्र पर आग लगती है, विद्यार्थी कूद कर जान बचाते हैं तो हम थोड़ा चौंकते हैं, लेकिन फिर अंधविश्वास से आँख मूंद लेते हैं। आग से बचने के लिए कूदते विद्यार्थियों को भूल जाने वाला समाज आज विद्यार्थियों के डूब कर मरने पर रो रहा है।

मुश्किल है कि इस बार भी हम सिर्फ तीन युवाओं के लिए रोएंगे। अब तक पूरी शिक्षा व्यवस्था के लिए नहीं रोएंगे तब तक हर अभिभावक का बच्चा इसी तरह असुरक्षित होगा। दिव्य-गुरुओं का मायाजाल इतना कमजोर भी नहीं है। आज कठघरे में सबसे पहले वह परिवार भी है जो इस व्यवस्था के अनुकूल है। उसे दम तोड़ते सरकारी स्कूल-कॉलेज को फिक्र नहीं है। सार्वजनिकता से निजता की ओर बढ़ते ढांचे का प्रतीक है-कोचिंग केंद्र।

भारत का ग्रामीण व अर्द्ध-शहरी समाज अब भी सामंतवाद की मानसिकता से बाहर नहीं निकल पाया है। वह अभी भी प्रशासकीय सर्वोच्चता में जाने के ही सपने देखता है। विरासत में मिले खेत बेच कर अपने अधूरे रहमंती सपनों को विरासत बच्चों को सौंप देते है कि आई ए एस, आई पी एस बनेगा तो पूरा खानदान 'सुधर' जाएगा। सरकारी संस्थाओं की कब्र पर सरकारी नहीं तो कुछ नहीं बनने का यहीं सपना कोचिंग गुरुओं की दिव्य कीर्ति का कारण है। अपने सपनों को रहमंती संकुन से बाहर निकालिए। अगर समाज और सरकार के खड़े किए गए स्कूल और कॉलेज इंजीनियर, डाक्टर व प्रशासनिक अधिकारी नहीं बना सकते तो इस ढांचे को दुरुस्त कीजिए न कि अपने और अपने बच्चों के सपनों को किसी कोचिंग कारोबारी के हवाले कर दीजिए।

साभार: जनसत्ता 3 अगस्त 2024

बालगीत

हम नये भारत के नन्हें बच्चे

हम नये भारत के नन्हें बच्चे यह कर दिखायेंगे
नयी सुबह की नयी किरण नया प्रकाश फैलायेंगे।
नयी तरह की नूतन, सो जो मानव के हित में हो
चलो रुढ़ियाँ तोड़ी जायें, बस नये उजाले चित में हो।
जाति-धर्म पर नहीं बँटेंगे, न इतिहास दोहारायेंगे।
देश महान बनेगा जिससे, उसी पथ पर बढ़े चलें
कल तक लड़ते रहे आपस में, चलो आज तो मिले गले।

भगत सिंह के सपनो को साकार बनायेंगे।
मैं बन जाऊ अशफ़ाक़, तुम उधम सिंह बन जाओ
बुरी नज़र पड़े दुश्मन की, सब मिलकर उसको मार भगाओ।
सी.वी. रमन, कल्पना चावला अपना स्थान बनायेंगे
मैं हिन्दू, तू मुस्लमान, हम कब तक यह दोहरायेंगे।
हम पूरक हैं एक दूजे के, न समझे तो पछतायेंगे
मेहनत का हक मिले सभी को, ऐसा समाज बनायेंगे।
हम भारत के नन्हें बच्चे यह कर दिखायेंगे।

– विक्रम राही

ले मशालें चल पड़े है,
लोग मेरे गाँव के।
अब अँधेरा जीत लेंगे,
लोग मेरे गाँव के।

– बल्ली सिंह चीमा

कोई नारी डायन/टोनही नहीं: डॉ. दिनेश मिश्र

गढ़चिरोली में अंधविश्वास के कारण दो की हत्या निंदनीय

अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के अध्यक्ष डॉ दिनेश मिश्र ने महाराष्ट्र के गढ़चिरौली में एक महिला सहित दो व्यक्तियों की जादू टोने के संदेह में मार पीट करने और जिंदा जलाने की घटना की कड़ी निंदा करते हुए कहा जादू टोने का कोई अस्तित्व नही हैं। ग्रामीणों को अंधविश्वास में पड़कर कानून हाथ में नहीं लेना चाहिए।

डॉ दिनेश मिश्र ने कहा ''महाराष्ट्र के गढ़चिरौली जिले मे आदिवासी बहुल इलाके एटापल्ली के बसेरवाड़ा गाँव में दो लोगों को काला जादू करने के संदेह में जिंदा जला दिया गया। जादू टोना करके एक बच्चे को बीमार करने और मार डालने के शक में कुछ ग्रामीणों ने पहले ग्राम में पंचायत बुलाई और तो देउ अतलामी एवम जमनी तेलामी नामक महिला को घर से निकाल कर 3 घंटे तक जमकर पीटा। इसके बाद उन्हें पेट्रोल डाल जिंदा जला दिया। शव को ऐसे ही गांव के बाहर नाले में फेंक दिया।''

मई के पहले सप्ताह में हुई यह घटना अत्यंत दुखद एवम निंदनीय है

डॉ दिनेश मिश्र ने कहा ''पिछले कुछ दिनों में टोनही /डायन के सन्देह में हत्या मारपीट, प्रताड़ना की घटनाएं सामने आयी हैं सिर्फ अंधविश्वास, जादू टोने जैसी भ्रामक मान्यताओं पर भरोसा कर किसी निर्दोष महिला एवं उसके परिवार पर हमला करने की घटनाएं, अनुचित है, दोषियों पर कड़ी कार्यवाही होनी चाहिए।''

डॉ. मिश्र ने कहा ''हर व्यक्ति की बीमारी, समस्या और उसके कारण अलग-अलग होते हैं जिनका समाधान सही चिकिसकीय उपचार, तर्कसंगत उपाय से किया जा सकता है। बीमारियाँ अलग अलग कारणों से होती हैं संक्रमण होने से, दुर्घटना होने, कुपोषण से व्यक्ति बीमार होता है। संक्रमण भी विभिन्न बैक्टीरिया, वायरस, फंगस से होता है, तथाकथित जादू टोने से कोई बीमार नही हो सकता, क्योंकि जादू टोने जैसी काल्पनिक मान्यताओं का कोई अस्तित्व ही नहीं है, इस लिए तथाकथित जादू टोने से ना ही कोई व्यक्ति किसी को भी मार कर सकता है, न ही किसी को परेशानी में डाल सकता हैं और न ही किसी व्यक्ति का किसी प्रकार से फसल आदि का कोई नुकसान कर सकता है, जादू टोने, टोनही, डायन की मान्यता सिर्फ अंधविश्वास है जिसका का कोई अस्तित्व नहीं है, और इस प्रकार के शक या सन्देह में किसी भी महिला को प्रताड़ित करना उसके व उसके परिवार के साथ मारपीट करना, अग्निपरीक्षा लेना, उसको जान से मारना अनुचित, क्रूर और अपराधिक है। ग्रामीणों को इस प्रकार के अंधविश्वास में नहीं पड़ना चाहिए।''

डॉ मिश्र ने कहा ''आरोपी को कड़ी से कड़ी सजा मिले ताकि भविष्य में कोई भी व्यक्ति इस प्रकार की अनुचित हरकत करने की चेष्टा ना कर सके।''

डॉ. मिश्र ने कहा ''देश के अनेक प्रदेशों में डायन/टोनही के सन्देह में प्रताडऩा की घटनाएँ आम है, जबकि कोई नारी टोनही या डायन नहीं हो सकती, उसमें ऐसी कोई जादुई शक्ति नहीं होती जिससे वह किसी व्यक्ति, बच्चों या गाँव का नुकसान कर सके। जादू-टोने के आरोप में प्रताडऩा रोकना आवश्यक है। अंधविश्वासों के कारण होने वाली टोनही प्रताड़ना/बलि प्रथा जैसी घटनाओं से भी मानव अधिकारों का हनन हो रहा है। जनजागरूकता के कार्यक्रमों से अंधविश्वास का निर्मूलन सम्भव है।''

पहला आंदोलन-

पहला आंदोलन
शायद बीज ने किया होगा
मिट्टी के विरुद्ध
और फूट पड़ा होगा
पौधा बनकर।
या फिर शिशु ने-
कोख के भीतर किया होगा
जन्म लेने के लिए।
हर बार-
आंदोलनकारी को प्रेम मिला है,
मिट्टी से भी,
और माँ से भी।
क्योंकि-
माँएँ जानती हैं कि
आंदोलन के बग़ैर
सृजन संभव नहीं।

-अशोक कुमार

नोएडा का मामला

भूत-प्रेत के नाम पर महिलाओं से ठगते थे गहने, पांच आरोपी दबोचे

नोएडा, 6 अगस्त (संवाददाता)

थाना एक्सप्रेस वे पुलिस ने पांच टप्पेबाजों को गिरफ्तार किया है। पकड़े गए आरोपी रेकी कर महिलाओं को जादू-टोने से सम्मोहित कर उनसे आभूषण लेकर फरार हो जाते थे। पुलिस का दावा है कि पकड़े गए आरोपी खुद को 'भक्त' बताते थे। इसी दौरान महिलाओं को जादू दिखाकर सम्मोहित कर लेते थे। पूछताछ में आरोपियों ने ऐसी तीन वारदातों को करना कबूल किया है। पुलिस ने टप्पेबाजों को सेक्टर 135 वाजिदपुर पुश्ता मोड़ के पास से पकड़ा है।

नोएडा जोन डी सी पी रामबदन सिंह ने बताया कि पकड़े गए टप्पेबाजों की पहचान विजय कुमार, मिथुन, नीरज खान, अरबाज निवासी दिल्ली और माहिर निवासी वसुंधरा गाजियाबाद के रूप में हुई है। आरोपियों ने पूछताछ में बताया कि वे दिल्ली एन सी आर में सड़क पर अकेली महिला को रोककर उसे 'भक्त' बताकर समस्याओं के समाधान का झांसा देकर उसे फंसा लेते थे। फिर एक पेड़ के पत्ते पर सोडियम डालकर उस पर थूकते थे, उस पर पानी डालते और उसमें आग लगा देते थे, जिसे ये बाबा का दीया कहते थे। नोएडा जोन ए डी सी पी मनीष कुमार मिश्रा ने बताया कि पूछताछ में पता चला है कि आरोपियों ने 28 जुलाई को लोटस जिंग सोसाइटी के पास एक महिला से लाकेट और एक जोड़ी बालियां छीन ली थी। कुछ दिन पहले सेक्टर 72 के पास अरोमा वाले मार्ग के पास भी इसी तरह से एक महिला से गले की चेन, बालियां व दो अंगूठियां छीन ली थीं।

21 कदम जाने का झांसा देकर गहने लेकर हो जाते थे फरार

इस बीच कुछ अन्य पीड़ित, जो इनके गिरोह के सदस्य होते थे, वो लक्ष्य के सामने अपना समाधान प्राप्त कर लेते थे और बाबा का धन्यवाद करते हैं। फिर ये लोग महिला को पूरे विश्वास में ले लेते थे और पीड़िता को बताते कि आपने जो गहने पहने हुए हैं, वो ही आपकी सारी समस्याओं का कारण हैं। फिर ये खुद महिला से गहने उतार लेते और महिला के हाथ पर एक पत्ता रखकर कहते कि बिना पीछे देखे 21 कदम आगे जाओ।

अंधविश्वास में जा रही लोगों की जान

आधुनिक व डिजिटल युग में इस तरह की घटनाएं मन में एक डर पैदा करती है। जिस तरह से देश चांद को नापने की ओर बढ़ रहा है तो दूसरी ओर आज भी अंधविश्वास के जाल में फंसकर लोग जान गवां रहे हैं।

यह सभ्य समाज के लिए चिंता की बात है। शिक्षा के साधन-सुविधा की बात सिर्फ मोबाइल व पुस्तकी ज्ञान तक सीमित हो गये है? आए दिन देश-प्रदेश के अलग-अलग शहरों, गांवों से इस तरह के समाचार सुनने, पढ़ने व देखने को मिल रहा है।

कोई तांत्रिक, बाबा, मौलाना, पादरी आदि के द्वारा ठग किया जा रहा है, तो कोई कुंडली देखकर डर, भय पैदा करके उन्हें उलझाने में लगे हैं। समाज में नॉकरी, पैसा, पॉवर, पद, प्रतिष्ठा से बंधे लोगों को ऐसे क्रूर घटनाओं की ओर आंखबन्द करने की आदत हो चुकी है!

आम-खास लोग विज्ञान व वेज्ञानिक सोच के प्रति भरोसा न करके वे धर्म, आस्था, आडम्बर, अंधविश्वास, कुरीतियों पर ज्यादा विश्वास करने लगे हैं। ऐसी तमाम सामाजिक बुराइयां परिवार, समाज व देश के लिए घातक है, तो आने वाली पीढ़ी के लिए सभ्य समाज की कल्पना सिर्फ कल्पना ही होगी।

चौखट में नीबू, मिर्ची टांगकर धंधा करने वाले, झांड़ फूंक से तबीयत ठीक करने वाले, तंत्र विद्या से मालामाल होने वाले और बलि प्रथा से परिवार में समृद्धि आने जैसी सोच ने इस भारत भूमि को मजाक व अंधविश्वास का देश बना दिया है।

दुखांत है, पढ़े-लिखे लोग भी ऐसे अंधविश्वासों पर आस्था प्रकट करते हैं !

- विजय मानिकपुरी

अक्तूबर की कुछ महत्वपूर्ण तिथियाँ

22 अक्तूबर (1900)

काकोरी काण्ड के शहीद अशफाक उल्ला ख़ाँ का जन्मदिवस।

26 अक्तूबर (1890)

अन्याय और जुल्म के खिलाफ संघर्षरत, भारतीय आज़ादी के प्रेणता तथा वाणी और कलम के सिपाही, गणेश शंकर विद्यार्थी का जन्मदिवस ।

27 अक्तूबर (1904)

शहीद क्रान्तिकारी यतीन्द्र नाथ दास का जन्मदिवस।

ब्रेनडेड लोगों के अंगदान से मिल रहा जीवन

जागरण संवाददाता, दक्षिणी दिल्ली

' अंगदान करने वालों के स्वजन का ओ आर बी ओ संस्था ने किया सम्मान, अंग और टिश्यू दान को लेकर सकारात्मक नजरिये पर दिया बल'

किडनी, लिवर, हार्ट और लंग्स दान से आसाध्य रोगों से जूझ रहे मरीजों की जान बच पा रही है। दुर्घटनावश ब्रेन डेड लोगों के अंगदान से यह संभव हो पा रहा है। दुख की घड़ी में संयम रखते हुए अंगदान जैसा साहसिक निर्णय लेने वाले मृतकों के स्वजन वर्तमान के महादानी है। एम्स निदेशक कार्यालय स्थित डाक्टर रामालिंगास्वामी सभागार में आर्गन रिट्रीवल बैंकिंग आर्गनाइजेशन (ओ आर बी ओ) ने ऐसे ही महादानी स्वजन का सम्मान किया। अध्यक्षता करते हुए एम्स के डीन (एकेडमिक) प्रो. कौशल कुमार वर्मा ने कहा कि हर साल अंगों और टिश्यू की अनुपलब्धता के कारण बड़ी संख्या में मरीजों की मौत हो जाती है। समाज में अंग और टिश्यू दान के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने की जरूरत है। ओ आर बी ओ की प्रमुख प्रो. आरती विज ने कहा कि अंग निकालने से लेकर प्रत्यारोपण तक की प्रक्रिया बहुत व्यापक है। कार्यक्रम में 15 मल्टी आर्गन और 11 टिश्यू डोनर के स्वजन के साथ ही अंगदान का लाभ उठाने वाले दो दर्जन से ज्यादा लाभार्थी भी मौजूद रहे। इस अवसर पर डीन (शोध) प्रो. जे. एस. टिटियाल, ए डी सी पी (दक्षिण) अचिन गर्ग सहित एम्स के विभिन्न संघों के पदधिकारी भी उपस्थित रहे।

हमारी दुनिया उजड़ी, लेकिन किसी के घर का चिराग बुझाने से बचे: अयोध्या निवासी राकेश मदनपुर बार्डर स्थित शाहपुर गांव में रहकर प्लंबर थे। पत्नी मालती के मुताबिक 11 नवंबर 2023 की सुबह भी काम के लिए निकले। शाम को काम करते हुए छत से गिर जाने की खबर मिली। 15 नवंबर को डाक्टरों ने ब्रेनडेड घोषित कर दिया। दोनों किडनी, हार्ट और कार्निया डोनेट करने के लिए कहा तो वे मना नहीं कर पाई। मालती ने कहा कि उनकी दुनिया तो वैसे ही उजड़ गई है। शायद इससे किसी के घर का चिराग बुझने से बच जाए।

पिता को समझाया, मां का अंगदान कराया

मूलरूप से यूपी के देवरिया की रहने वाली चंदा देवी परिवार के साथ भिवाड़ी में रहकर प्राइवेट कंपनी में जाब करती थीं। 15 मई 2024 को काम से लौटने के दौरान सड़क दुर्घटना में घायल हो गई। एम्स में इलाज चला। 18 मई को उन्हें ब्रेन डेड घोषित किया गया। डक्टरों के समझाने पर बेटी सृष्टि मां के अंगदान के लिए तैयार हुई। चंदा देवी का हार्ट, लिवर, कार्निया व फेफड़े दान किए।

मां ने कई जिंदगी की रोशन

राजस्थान की रहने वाली प्रेमवती तीन फरवरी को सीढ़ियों से गिर पड़ीं। सिर में गंभीर चोट लगी। एम्स लाई गई। पांच फरवरी को उन्हें ब्रेनडेड घोषित किया गया। बेटी सुनीता, ममता, सरिता एवं बेटे खेम चंद व कुशाल मां के हार्ट, लिवर व कार्निया डोनेट करने को लेकर सहमत हुए।

10 वर्ष पहले ही पति-पत्नी ने कर दिया था अंगदान: मूलरूप से चेन्नई निवासी और वर्तमान में नोएडा के रहने वाले ए गोविंदन और उनकी पत्नी अमृतावल्ली गोविंदन ने 10 वर्ष पहले ही अंगदान की घोषणा कर दी थी। आठ मार्च को अमृतावल्ली गोविंदन को ब्रेन स्ट्रोक आया। उन्हें एम्स लाया गया। तीन महीने इलाज के बाद उन्हें ब्रेनडेड घोषित कर दिया गया। पति ए गोविंदन और बेटी पवित्रा गोविंदन ने की सहमति से उनका टिश्यू और कार्निया डोनेट किया गया।

उठो

गाँव गाँव से उठो
बस्ती बस्ती से उठो
इस देश की सूरत
बदलने के लिए उठो
हाथ में जिसके कलम है
कलम लेके उठो
हाथ में जिसके औजार
औजार लेके उठो

- नेपाली गीत

वो मुझपर गोबर फेंकते रहे
और
मैं उनकी बेटियां
को पढ़ाती रही ....।

- सावित्रीबाई फुले

महाराष्ट्र में चली गई थी 340 श्रद्धालुओं की जान

भारत में मंदिरों एवं अन्य धार्मिक आयोजनों के दौरान भगदड़ होने से बड़ी संख्या में लोगों की मौत की यह पहली घटना नहीं है। महाराष्ट्र के मंधारदेवी मंदिर में 2005 के दौरान हुई भगदड़ में 340 श्रद्धालुओं की मौत और 2008 में राजस्थान के चामुंडा देवी मंदिर में हुई भगदड़ में कम से कम 250 लोगों की मौत हो गई थी। हिमाचल प्रदेश के नैना देवी मंदिर में भी 2008 में ही धार्मिक आयोजन के दौरान मची भगदड़ में 162 लोगों की जान चली गई थी।

पहले भी हो चुकी हैं कई मौत

1 जनवरी 2022: माता वैष्णो देवी मंदिर में श्रद्धालुओं की भारी भीड़ के कारण मची भगदड़ में कम से कम 12 लोगों की मौत हो गई और एक दर्जन से अधिक घायल हो गए।

14 जुलाई, 2015 : आंध्र प्रदेश के राजमुंदरी में गोदावरी पुष्करलु के दौरान मची भगदड़ में कम से कम 22 तीर्थयात्री मारे गए, जिनमें अधिकतर महिलाएं थीं और 20 अन्य घायल हो गए।

3 अक्तूबर, 2014: पटना के गांधी मैदान में दशहरा उत्सव के दौरान रावण दहन के बाद मची भगदड़ में 32 लोगों की मौत हो गई।

18 जनवरी, 2014: मुंबई के मालाबार हिल स्थित दाऊदी बोहरा धर्मगुरु सैयदना मोहम्मद बुरहानुद्दीन के आवास के बाहर भगदड़ मचने से 18 लोगों की मौत हो गई।

13 अक्तूबर, 2013: मध्य प्रदेश के दतिया में रतनगढ़ हिंदू मंदिर के पास भगदड़ में 89 लोग मारे गए और 100 से अधिक घायल हुए।

10 फरवरी, 2013: कुंभ मेले के दौरान इलाहाबाद रेलवे स्टेशन पर भगदड़ में 36 लोग मारे गए।

19 नवंबर, 2012: छठ पर्व के दौरान पटना में एक घाट पर भगदड़ में 20 लोगों की मौत।

8 नवंबर, 2011: हरिद्वार में गंगा नदी के तट पर हर-की-पौड़ी घाट पर भगदड़ में 22 लोगों की मौत।

14 जनवरी, 2011: केरल के सबरीमाला मंदिर में भगदड़ में 106 तीर्थयात्री मारे गए। 100 से अधिक घायल हुए।

4 मार्च, 2010: उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ में राम जानकी मंदिर में भगदड़ मचने से 63 लोगों की मौत हो गई, क्योंकि लोग एक स्वयंभू बाबा से मुफ्त कपड़े और भोजन लेने के लिए एकत्र हुए थे।

30 सितम्बर, 2008: नवरात्रि उत्सव के दौरान राजस्थान के जोधपुर में पहाड़ी पर स्थित चामुंडा देवी मंदिर में भगदड़ मचने से 120 से अधिक लोग मारे गए और 200 घायल हो गए।

3 अगस्त, 2006: हिमाचल प्रदेश के नैना देवी मंदिर में भगदड़ में लगभग 150 श्रद्धालु मारे गए और 400 से अधिक घायल हुए।

26 जनवरी, 2005: पश्चिमी महाराष्ट्र के सतारा जिले में वाई के निकट मंढेर देवी मंदिर में आयोजित धार्मिक मेले में लगभग 350 श्रद्धालुओं की मौत हो गई। 200 से अधिक घायल हो गए।

एक सवाल आपसे भी है

दृश्य एक: हवन हो रहे हैं नन्हा करसन दास वहीं पर बैठा है। वह सवाल पूछता है ''यह अग्नि में अनाज क्यों डाला?''

जवाब मिलता हैं ''वह भगवान तक पहुंचता है।''

नन्हा करसन सवाल करता है ''तो अग्नि को भगवान का पता पता है ?''

दृश्य दो: मंदिर जाते हुए नन्हा करसन मां से सवाल करता है ''मां हम रोज क्यों जाते हैं ?''

दृश्य तीन : ''हवेली में पहुंचकर नन्हा करसन प्रतिमा को देखकर सवाल करता है यह बाजू में कौन है ?''

मां जवाब देती है ''जिन्होंने हमारे धर्म की स्थापना की थी। लेकिन इतने सवाल करोगे तो पूजा कैसे करोगे। चलो हाथ जोड़ो।'' बालक करसन चुपचाप हाथ जोड़ देता है ।

मां कहती है ''बाबा मेरे करसन नू ध्यान राखजो।'' बालक करसन फिर बोल पड़ता है ''बाबा को गुजराती आती है? वह हमारे गांव के हैं ? बोलो ना मां ?'' मां उसे चुप कर देती है ।

दृश्य 4 : सीढ़ियां उतरते हुए बालक करसन पूछता है ''मां और भाभू घूंघट क्यों रखती है ?''

पिता जवाब देते हैं ''उनको दूसरों की बुरी नजर ना लगे इसलिए।'' इतने में मां और भाभू लड़खड़ा जाती हैं। करसन कहता है ''ऐसे घूंघट का क्या मतलब जिनमें से उनको ही नजर ना आए।''

मित्रों फिल्म 'महाराज' में यह दृश्य बहुत अच्छे लगते हैं। सवाल यह है कि अगर ऐसा बच्चा आपके घर में हो और वह ऐसे सवाल करें तो आप क्या करेंगे ? उसके सवालों के सही सही जवाब देंगे या उसे चुप करा देंगे ? – **शरद कोकास**

करवा चौथ: परंपरा के नाम पर यह कैसा अंधविश्वास

कुमार अभय

आजकल महिलाओं के बीच दशहरा-दीवाली से ज्यादा करवा चौथ के चर्चे हैं। ज्यादातर विवाहित और अविवाहितों ने अभी से ही 1-2 दिनों की छुट्टियां लेने का मन बना लिया है।

कहते हैं, करवाचौथ का व्रत महिलाएं अपने पति की लंबी उम्र के लिए रखती हैं और इस दिन वे सुबह से रात चांद निकलने तक कुछ नहीं खाती-पीती हैं। रात को चांद देखने के बाद पति के हाथों पानी पी कर ही व्रत समाप्त करती हैं।

दक्षिण भारत में ज्यादा प्रचलित क्यों नहीं

आप को यह जान कर आशर्च्य होगा कि करवा चौथ का त्योहार ज्यादातर उत्तर भारत में ही मनाया जाता है। दक्षिण भारत के कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, तेलंगाना आदि राज्यों में यह न के बराबर मनाया जाता है।

सवाल है कि जब दक्षिण भारत में इसे नहीं मनाया जाता है फिर वहां के पुरुषों की उम्र उत्तर भारतीयों की अपेक्षा कम होनी चाहिए?

नहीं, बिलकुल नहीं। आपको यह जान कर हैरानी होगी कि दक्षिण भारतीय पुरुषों की उम्र उत्तर भारतीय पुरूषों की तुलना में अधिक होती है और वे यहां के पुरूषों की अपेक्षा स्वस्थ भी होते हैं।

अंधविश्वास की पराकाष्ठा

करवा चौथ को आस्था कहें या अंधविश्वास, सच तो यह है कि यह भी एक गुलाम परंपरा की तरह ही है, जिसकी बेड़ियों में आज भी महिलाएं बंधी हैं।

गुरुग्राम में एक मल्टीनैशनल कंपनी में कार्यरत इंजीनियर संदीप भोनवाल बताते हैं, ''यह एक ऐसा त्योहार है, जिस में महिलाएं दिन भर भूखी-प्यासी रह कर पति की लंबी उम्र और स्वस्थ जीवन की कामना करती हैं।''

''अगर इस त्योहार को करने से पति स्वस्थ जीवन बिताए और लंबी उम्र का हो जाए तो फिर अस्पतालों में भीड़ दिखनी बंद हो जाए। मेरा मानना है कि करवा चौथ का व्रत रखने से पति की आयु लंबी होती हो तो फिर पतियों की उम्र तो सैकड़ों साल लंबी होनी चाहिए।''

संदीप कहते हैं, ''पति-पत्नी जीवनरुपी गाड़ी के 2 पहिए हैं, जिन का साथ एक-दूसरे के सुख-दु:ख में साथ निभाने की होना चाहिए। गृहस्थ जीवन को सुचारू रूप से चलाने के लिए पति-पत्नी के बीच आपसी अंडरस्टैंडिंग जरूरी है न कि करवा चौथ का व्रत।''

सिर्फ अंधविश्वास है

समाजसेवी अनिता शर्मा मानती हैं कि ''इस व्रत की कहानी अंधविश्वासपूर्ण भय उत्पन्न करती है न कि पति की उम्र बढाती है।''

वे कहती हैं, ''क्या पत्नी के भूखे रहने से पति की लंबी आयु हो सकती है? दरअसल, यह अंधविश्वास और आत्मपीड़न की बेडियों में जकड़ने की एक साजिश है, जिसकी शुरूआत ही महिलाओं को परंपरा के नाम पर शोषित करना है।''

आस्था के नाम पर यह कैसी मानसिकता

धर्म और आस्था के नाम पर महिलाओं पर शुरू से ही अत्याचार किए जाते रहे हैं। पति की लंबी आयु के लिए पत्नी व्रत करेगी, बच्चों की सुखद भविष्य के लिए मां यानी एक महिला व्रत करेगी, वह घर के लिए त्याग करेगी, सब से अंत में खाना खाएगी।

क्या पति अपनी पत्नी के लिए व्रत रखता है? पत्नी की लंबी आयु के लिए समाज में कोई व्रत निर्धारित है?

माना कि नारी प्रकृति की अनमोल कृति है, त्याग की मूर्ति है, कोमल ह्रदय की है पर क्या यही अपेक्षा पुरुषों से नहीं की जानी चाहिए?

औरत से ही अपेक्षा क्यों?

हकीकत तो यह है कि भारतीय समाज सिर्फ एक औरत से ही सब कुछ पाने की उम्मीद करता है पर नारी को आज भी वह सम्मान नहीं मिल पाया जिस की वह हकदार है.

इस समाज में कुछ आतातायी पुरुष मासूम बच्चियों तक को हवस का शिकार बनाने से नहीं चूकते। क्या उन्हें यह पता नहीं कि उस को शरीर देने वाली उस की माता भी एक औरत है, तो कम से कम औरतों की सम्मान करना तो सीखे.

अच्छा तो यह है कि-

1. पति और पत्नी में जीवनभर सामंजस्य रहे।
2. पति पत्नी पर अत्याचार न करे।
3. पत्नी पर घरेलू हिंसा न हो।
4. पत्नी को घर के सभी लोग सम्मान दें।
5. पति नशा न करे और न ही पत्नी पर कभी हाथ उठाए।
6. पत्नी के सपनों और आजादी को कुचला न जाए।
7. घर के कामकाज में पति पत्नी का हाथ बंटाए।

साभार: 'सरिता' पत्रिका (सितंबर 2019)

अंग प्रदान का महत्व

गुरमीत अम्बाला

विश्व मे हर वर्ष 13 अगस्त को अंग दान (प्रदान) दिवस के रूप में मनाया जाता है। इस दिन का महत्व इस लिए है कि लोग जरूरतमंद के लिए अंग प्रदान करने को आगे आएं, इससे बहुत से ऐसे मरीजों की जान बचाई जा सकती है जिनके शरीर के कुछ अंग शरीर के लिए काम न कर पा रहे होते हैं। भारत मे हर वर्ष लगभग पांच लाख लोगों का जीवन बचाने के लिए विभिन्न अंगों की आवश्यकता पड़ती है, जबकि प्राप्त अंगों की संख्या लगभग पचास हजार रहती है। जिसके अभाव में लगभग एक लाख लोग दम तोड़ देते हैं। अगर हम विश्व स्तर का अध्ययन करें तो इंटरनेशनल आर्गन डोनेशन एन्ड ट्रांसप्लांट की रिपोर्ट के अनुसार भारत इस मामले में बहुत निचले पायदान पर है जहां अमेरिका में दस लाख पर 41 है वहीं भारत मे 0.04 है। भारत मे दु:खद स्थिति है कि 1.50 लाख लोग सड़क दुर्घटनाओं में अपनी जान गंवा देते हैं जिनमे से बड़ी संख्या ब्रेन डेड लोगों की होती है जिनके अंग जरूरतमंद को प्रदान किए जा सकते हैं। पहले भारत मे चर्चा चली थी कि ड्राइविंग लाइसेंस बनाते समय यह शपथ भरना अनिवार्य बनाया जाएगा कि अगर किसी की मृत्यु सड़क दुर्घटना में होगी उसके अंग प्रदान का अधिकार चिकित्सीय विभागों को रहेगा,लेकिन इस सम्बंध में लगातार अभियान चला कर इसे कानूनी जामा नही पहनाया गया है।

सरकार ने वर्ष 2019 में लगभग 150 करोड़ रुपए के बजट प्रावधान के साथ अंग प्रत्यारोपण का कार्यक्रम तय किया था, लेकिन व्यवहारिक स्तर पर उतना कार्य नही हो सका, जिसकी अपेक्षा की गई थी। मुख्यत: अकेले सरकारी उपक्रमो से अंग प्रदान की जागरूकता पर्याप्त नही होगी इसके लिए सामाजिक, धार्मिक संस्थाओं के सहयोग की आवश्यकता होगी। इस मकसद को हासिल करने के लिए दो स्तरों पर कार्य की आवश्यकता है एक मृतक दिमाग के व्यक्तियों के अंगों को जरूरत मन्दो के लिए उपलब्ध कराने की जागरूकता बनाना, दूसरा है मृतक शरीर को चिकित्सीय उपयोग हेतु मैडीकल कालेजों को उपलब्ध कराना। इस दिशा में जनवरी 2001 में तर्कशील सोसायटी ने अपने स्तर पर पंजाब/हरियाणा में शुरुआत की थी। सर्वप्रथम तर्कशील सोसायटी के प्रधान कृष्ण बरगाड़ी के मृतक शरीर को सी. एम. सी. लुधियाना को प्रदान किया गया था जिससे बाद में यह लहर बन गई और अब तक 100 से भी ऊपर मृतक शरीर चिकित्सीय उपयोग हेतु तर्कशील सोसायटी द्वारा मेडिकल कालेजों को प्रदान किए गए हैं।

8 अगस्त 2024 को पश्चिम बंगाल के भूत पूर्व मुख्यमंत्री बुद्ध देव भटाचार्य की मृत्यु हो गई जिसके उपरांत उनका मृतक शरीर चिकित्सीय उपयोग हेतु मैडीकल कालेज को प्रदान किया गया। इससे पहले 17 जनवरी 2010 को पश्चिम बंगाल के भूत पूर्व मुख्यमंत्री ज्योति बसु के मृतक शरीर को भी चिकित्सीय उपयोग हेतु मैडीकल कालेज को प्रदान किया गया था। पंजाबी के प्रसिद्ध लेखक संतोख सिंह धीर के मृतक शरीर को 8 फरवरी 2010 को पी. जी. आई. चंडीगड़ में चिकित्सीय उपयोग हेतु प्रदान किया गया था। बड़ी शख्सियतों के इस प्रकार के कार्य को ज्यादा प्रचार मिलना चाहिए जिससे आम जनता में व्यापक प्रभाव बने व लोग आगे आएं, लेकिन देखने मे आया कि अभी 8 अगस्त 2024 को पश्चिम बंगाल के भूत पूर्व मुख्यमंत्री बुद्ध देव भटाचार्य की मृत्यु के बाद उनके मृतक शरीर को, दाह संस्कार न करके मानवता के हित मे मैडीकल कॉलेज को सौंपने के कार्य को मुख्य प्रिंट मीडिया ने कोई स्थान नहीं दिया जबकि 13 अगस्त को अंग प्रदान दिवस था।

आज जरूरत है कि सरकारी व गैर सरकारी सभी संस्थान जो मृतक शरीर को चिकित्सीय उपयोग में लाने की दिशा में कार्यरत हैं इस दिशा में व्यापक जागरूकता फैलाएं। आज बहुत से मैडीकल कालेज जीवित रहते ही अपने मृतक शरीर को चिकित्सीय उपयोग के लिए प्रदान करने के संकल्प के फार्म भरवाते हैं एंव पहचान पत्र जारी करते हैं ताकि अन्य लोगों को भी प्रेरणा मिले। इसके साथ ही अगर किसी व्यक्ति की मृत्यु ब्रेन डेड होने के कारण होती है उसके लिए अनिवार्य रूप से अंग प्रदान करने के लिए ड्राइविंग लाइसेंस बनवाते समय संकल्प कराया जाए। इस स्थिति में तो ज्यादा समस्या भी नही आती क्योंकि जरूरी अंगों को शरीर से निकालने के बाद संस्कार या दफन करने के लिए मृतक शरीर वारिसों को वापिस दे दिया जा सकता है।

मुख्य रूप से कानूनी प्रावधानो के साथ ही व्यापक जागरूकता फैलाने की इस दिशा में जरूरत है।

डार्विन का पारिवारिक विरोध

प्रगतिशील मूल्यों की तरफदारी करने वाले व्यक्तियों को समाज में कई प्रकार के संघर्षों से गुजरना पड़ता है। इन्हें व्यंग या चुनौती की भाषा में एक सीधे से सवाल का सामना जो करना पड़ता है वह यही होता है कि पहले वह अपने घर को तो सुधार लें या उन्हें मना ले। मान लो आपकी पत्नी बहुत अंधविश्वासी है और आप वैज्ञानिक मानसिकता का झंडा उठाए हैं तो आपको यह सब झेलना पड़ता है। बहुत सारे हम ऐसे सवालों को ठीक से संबोधित नहीं कर पाते और कई बार हमारी अपनी ऊर्जा भी ऐसे मामलों में मध्यम पड़ जाती है। इतिहास में अनेक महापुरषों के ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं। सुकरात की कहानी हमारे सामने है। इनकी पत्नी सुकरात की जनसंवाद संस्कृति से बहुत दुखी थी। ऐसा ही एक उदाहरण डार्विन का हमारे सामने है। लेकिन यह उदाहरण कई अर्थों में उल्लेखनीय है।

हम सभी जानते हैं कि डार्विन एक वैज्ञानिक थे। इनकी पत्नी का नाम एमा था। इनके दस संतान हुई थी। डार्विन का घर प्रकृति में घने जंगलों के बीच था। बचपन में ही इन्हे पर्वत, नदियां, पशु-पक्षी तथा वृक्षों का अवलोकन करने का अवसर मिला था। ये बचपन से ही मरे हुए कीट-पतंगों और पक्षियों को बारीकी से देखते थे। धीरे-धीरे इन्होंने इनका संग्रह करना शुरू किया। वे अपने संग्रह को बढ़ाने को लिए कभी-कभी पक्षियों का शिकार भी कर लिया करते। इनकी बड़ी बहन को यह सब अच्छा नहीं लगता था। उनके आग्रह के बाद इन्होंने यह आदत छोड़ दी क्योंकि वह अपनी बड़ी बहन की बहुत इज्जत करते थे और उन्हें मां के समान दर्जा देते थे।

युवावस्था में ही इन्हें बीगल जलयान में सवार होकर लंबी यात्राओं पर जाने का अवसर मिला था। इसी यात्रा के दौरान इन्होंने विभिन्न जीव-जन्तुओं तथा इनके अवशेषों के नमूने एकत्र किए थे। इसी यात्रा की बदौलत इनकी सेहत खराब हो गई। और ये ताउम्र कमजोर ही बने रहे। लेकिन इस यात्रा ने इन्हें मानसिक मजबूती प्रदान की जिसके दम पर ये अपना मत दे पाए। इन्होंने लगभग 20 वर्ष अपने एकत्रित नमूनों पर अध्ययन किए और सन् 1859 में अपने सबूतों पर आधारित अपनी संकल्पना को सिद्धान्त रूप में प्रकाशित किया। यह पुस्तक **'द ओरिजन ऑफ स्पीशीज'** एक लंबी बहस है।

इस पुस्तक को पढ़ने के बाद सरलता से इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि पृथ्वी पर जीवों का आना व विकसित होना एक लंबे प्राकृतिक संघर्ष में प्राकृतिक चयन की प्रक्रिया है। स्वभाविक है यह बात उस समय इंग्लैंड में ईसाइयत को कैसे गवारा होती। उनके शास्त्रों में उत्पत्ति का सिद्धांत कुछ ओर कहता है। पादरियों ने इनका विरोध किया। इन्हें पागल तक कहा गया। इन्हें सजा देने की मांग उठने लगे। डार्विन तो बहुत ही शांत स्वभाव के विनम्र व्यक्तित्व व शरीर से कमजोर थे। वे धार्मिकता के साथ पचड़े में पढ़ना ही नहीं चाहते थे। ये तो खुद बहुत ही कम बहसों में हिस्सा लेते थे। इनके समर्थक ही बढ़-चढ़ कर बहसों में भाग लेते थे। जब भी डार्विन के समर्थन किसी गंभीर बहस में उलझते तो प्रशंसा भी डार्विन की होती और यदि गालियां सुननी होती तो भी डार्विन को झेलनी पड़ती। जहां तक बहस वैज्ञानिकों के बीच और पब्लिक में हो तो भी एक बात है। यदि बहस घर में ही हो तो फिर कोई क्या करें। डार्विन खुद पब्लिक बहसों में बहुत कम भाग लेते थे। इस प्रकार वे कट्टर धार्मिक व्यक्तियों से तो खुद को बचाने में काफी हद तक सफल रहे थे। एमा बहुत धार्मिक थी। अब वह उनसे कैसे निपटें। डार्विन तो नास्तिक हो चुके थे। उनकी पत्नी इस बात को लेकर बहुत चिंतित थी कि उनके पति विवेकशील और वैज्ञानिक सोच पर इनता ज्यादा ध्यान देते है जबकि भावनात्मक मुद्दों पर वे जरा भी संवेदनशील नहीं है। उन्हें इस बात की चिंता सताती थी कि उनके पति ईश्वर में विश्वास नहीं रख रहे हैं तो कहीं इन्हें अगले जन्म में 'नर्क' की ज्वाला में न जलना पड़े। यहां यह बात उल्लेखनीय है कि उन्हें अपने पति की कितनी ज्यादा चिंता थी। लेकिन डार्विन के दिमाग पर ऐसा कोई बोझ नहीं था।

डार्विन बहुत संकोची व्यक्ति थे। अपने विश्वास को
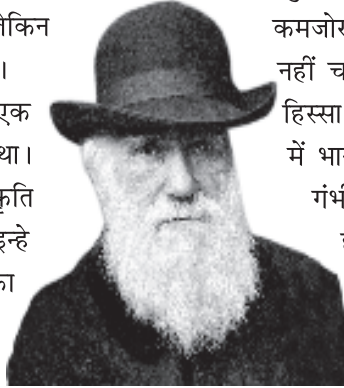
सरेआम कहते नहीं फिरते थे। अपने अंतिम दिनों में इन्होंने अपनी आत्मकथा लिखने की सोची। इसमें इन्होंने अपने विश्वास मत के बारे में स्पष्ट लिख दिया। इनकी यह जीवनी इन्की मृत्यु उपरांत प्रकाशित हो पाई। इनकी यह आत्मकथा एमा ने प्रकाशित की थी। प्रकाशित होने से पहले एमा ने इसे संपादित किया। कुछ जगह फेरबदल भी किए। वह नहीं चाहती थी कि उनका विश्वास मत (नास्तिक) जगजाहिर हो। वे यह भी नहीं चाहती थी कि उनके बच्चों को इस बात के लिए बुरा-भला सुनना पड़े कि उनके पिता एक नास्तिक व्यक्ति थे। इन सब बातों की पुष्टि अन्य अधिकारित स्रोतों से भी होती है। एक बार डार्विन के एक मित्र ने बहुत आग्रह किया कि वे अपना विश्वास मत स्पष्टता से बताएं। डार्विन ने अपनी लेटर पैड के पन्ने पर एक पंक्ति का उत्तर लिख दिया कि उनका शास्त्रों में वर्णित (ईसाइयत) उत्पत्ति सिद्धान्त पर कोई विश्वास नहीं रहा है। उनका यह पत्र उनकी मृत्यु के बहुत वर्षों बाद सामने आया है। नीलामी में उनकी यह एक पंक्ति लाखों रुपए में बिकी है। यह भी एक बड़ा दिलचस्प किस्सा है।

''ओरिजन ऑफ सपीशीज'' के प्रकाशन के ठीक एक सौ वर्ष बाद 1959 में डार्विन की पौत्री नोरा बालो ने ही हिम्मत दिखाई है। इन्होंने ही अपने दादा की सारी सच्चाइयाँ दुनिया के सामने रखी हैं। उन्होंने निसंकोच स्पष्ट किया है कि उनके दादा का चर्च के साथ क्या संघर्ष था और उनकी दादी के साथ कैसे वैचारिक मतभेद (मनभेद नहीं) थे। इन्होंने यह जीवनी पुनः प्रकाशित की है। इस जीवनी में डार्विन बड़ी ही इमानदारी और विनम्रता से स्वीकार करते हैं कि मेरा विश्वास कोई अचानक संयोग नहीं बना है। मेरा यह भ्रम धीरे-धीरे दूर हुआ है। जैसे-जैसे मैंने अपने परिवेश का विवेकापूर्ण अध्ययन किया है। मेरा विश्वास ईसायत से दूर होता गया है। ये अपनी जीवनी में लिखते हैं मेरा विश्वास बहुत धीमी गति से आगे बढ़ा है। अब मैं पूर्ण रूप से आश्वव्सत हूं। इस प्रक्रिया में मुझे कोई तकलीफ महसूस नहीं हुई। अब मेरे लिए यह देखना भी कठिन होता जा रहा है कि क्यों पढ़े-लिखे लोग भी ईसायत को पढ़कर इसे सच्चा मान लेते हैं। इसमें मेरे भाई-बंधु व सगे-संबंधी भी शामिल है।

नोरा बालो लिखती हैं कि यही वह पैरा है जहां मेरी दादी ने कैंची चलाई है। इनकी दादी ने स्वयं अपनी लिखाई में नोट लिखा है कि वे इस बात को पसंद नहीं करती। वे इस बात को बिल्कुल हजम नहीं कर पाई। डार्विन का यह स्पष्ट विचार था कि हमारे भूत का संचालन शास्त्रों के हाथ में रहा है परन्तु मानवजाति का भविष्य विज्ञान व दर्शन के हाथों में होगा। वे लिखते हैं- मैंने विज्ञान का रास्ता अपनाया है और दुनिया के साथ सच को सांझा किया है। वह अपनी जीवनी में अपने विज्ञान के प्रति प्रेम को दर्शाते हैं। वे अपनी प्रतिबद्धता पर दृढ़ हैं। इनके पिता जी तो इनके चिकित्सक बनाना चाहते थे। डार्विन को यह रुचिकर नहीं लगा। इसके बाद उनके पिता जी ने सोचा कि चलो डार्विन पादरी ही बन जाए। जैसे-जैसे डार्विन ने ईसायत को पढ़ा परिणाम कुछ ओर ही निकलता गया।

शांत रहकर, कम बोल कर ठोस तर्कों के सहारे डार्विन ने धर्म बनाम विज्ञान का संघर्ष पार कर लिया। लेकिन वे जीवन पर्यंत अपनी पत्नी के साथ अपने वैचारिक संघर्ष को पार नहीं कर पाए। वे एमा से बेहद प्रेम करते थे। यद्यपि ये अपनी पत्नी से नास्तिकता की बहस कभी नहीं करते थे। लेकिन एमा को सब पता था। वे इन विचारों से खुश नहीं थी। इन्होंने एक बार हिम्मत करके डार्विन से पूछ लिया कि आपकी तर्क, विवेक एवं वैज्ञानिकता से बढ़कर भी कोई शक्ति विद्यमान हो सकती है। इसलिए वे सर्वशक्तिमान की अवधारना की संभावना को खारिज न करें। वे आगे कहती हैं कि आपकी तो यह आदत हो गई है कि आप बिना सबूतों के यकीन नहीं करते। आपके दिमाग पर प्रमाण व सबूत ही हावी रहते हैं। कुछ बातें ऐसी भी हो सकती हैं जो प्रमाणों या सबूतों से सिद्ध ना भी हो और सच भी हों। ऐसी सच्चाइयाँ हमारी समझ से ऊपर भी हो सकती हैं। डार्विन अपनी पत्नी को अपने तर्कों से संतुष्ट नहीं कर पाए।

डार्विन दिल के बहुत साफ थे। वे एमा की भावनाओं को बदल ही नहीं सके। वे पूरी उम्र द्वंद्व में रहे। एमा द्वारा पूछे गए प्रश्नों के उत्तर में वे लिखते हैं-जब मैं मर जाऊं उस समय आप समझोगे कि मैंने आपको कितनी बात चुंबन किया है और मैं कितना रोया हूँ। दिल व दिमाग के द्वंद्व के बीच यह चुंबन व आँसू की सौगात ही होती है जो एक नास्तिक को नसीब होती है, जब वह एक धार्मिक स्त्री से शादी करता है।

धरती को सोना बनाने वाले भाई
माटी से हीरा उगाने वाले भाई
अपना पसीना बहाने वाले भाई
तेरी मेहनत को लूट रहे है कसाई।

-ब्रज मोहन

गुजरात में काला जादू और झाड़-फूंक के खिलाफ विधेयक पारित

राज्य ब्यूरो, गांधीनगर - गुजरात में लोगों को अंधविश्वास के जाल में फंसाकर काला जादू के जरिये बीमारी ठीक करने तथा झाड़-फूंक और नरबलि जैसे अपराधों के लिए विधान सभा में सर्वसम्मति से विधेयक पारित किया गया। नरबलि के मामले में सात वर्ष तक की सजा का प्राविधान किया गया है। गृह राज्य मंत्री हर्ष संघवी ने कहा कि गुजरात के कई परिवारों ने बहन, बेटी व बच्चों को काला जादू व अमानवीय गातिविधियों के कारण खोया है।

गृह राज्य मंत्री ने विधानसभा में विधेयक पेश करते हुए कहा कि लोगों को अंधविश्वास के जाल में फंसाकर ठगने वाले, नरबलि व झाड़-फूंक के जरिये इलाज के बहाने अत्याचार करने वाले ढोंगियों से लोगों की रक्षा के लिए यह विधेयक लाया गया है। इसमें छह माह से लेकर सात वर्ष तक की सजा का प्रविधान है। चमत्कार के नाम पर ढोंगी लोग महिला व पुरूषों को ठगते हैं। अघोरी लोग महिला व पुरुषों को ठगते हैं। अघोरी पूजा, काला जादू, गड़ा धन खोजने व गंभीर बीमारी के इलाज के बहाने ढोंगी लोग महिलाओं व बच्चों पर अत्याचार करते हैं। विधेयक में धार्मिक यात्रा, कीर्तन, उपदेश, संत महात्माओं के संदेश का प्रचार-प्रसार, प्राचीन विद्या एवं कला के उपदेश देना तथा ऐसे किसी भी कार्य से लोगों को शारीरिक नुकसान न हो तो अपराध नहीं माना जाएगा।

दैनिक जागरण 23 अगस्त 2024

लड़ो

लड़ नहीं सकते, बोलो
बोल नहीं सकते, लिखो
लिख नहीं सकते, साथ दो
साथ नहीं दे सकते,
काम करने वालों का मनोबल बढ़ाओ
यदि वो भी नहीं कर सकते हो,
जो कर रहे हैं, उनका मनोबल मत तोड़ों
क्योंकि वो तुम्हारे हिस्से की लड़ाई लड़ रहा है।

- खुदीराम बोस

हरियाणावी रागणी

टोटा किसे कै, ना लिख राख्या..

- अंग्रेज सिंह अलेवा

टेक-टोटा किसे कै, ना लिख राख्या, क्यों किस्मत नै रोरी सै।
मान चाहे ना, मान ताई री, रोल राज मैं होरी सै।।

पिछले जन्म मैं, खोट खामखां, टोहण लागरे ताई
लिखा भाग मैं समझ कै टोटा, ढोहण लागरे ताई री
किस्मत किस्मत, करकै जिंदगी, खोण लागरे ताई री
लूट मचाकै लूटू मोटे, होण लागरे ताई री
अपणी डालां बहुत सी जनता, न्यू, सूखा थूक बिलोरी सै

राजपाट सै बड़े बडयां का, साची बात बतारया री
कितणाए धंधा करल्यां फिर भी, पां ऊपर ना आरया री
हम किस्मत मैं फसरे सां यो, लूटू लूट मचारया री
अण समझी मैं न्यू हमारा, ध्यान कदे ना जारया री
म्हारी कमाई लूट कै इनती, ठाढी भरी तिजोरी सै

इस किस्मत को पाड़ कै देख्या, ना लिख राख्या टोटा री
या भी झूठ सै कर्म अनुसार, कोई बड़ा कोए छोटा री
आंख फुटरी नहीं दिखता, बड़या फसल मैं झोटा री
म्हारे चेहरे दिए सुखा यो चर चर होरया मोटा री
संगठन सोटे बिन लिकडै ना, झोटा मारणा खोरी सै

हरियाणा के जींद जिले मैं, बसै अलेवा गांम मेरा
करया कोर्स, ना मिली नौकरी, नक्शा जड़या तमाम मेरा
किसान सभा का बण मैंबर इब, आंदोलन का काम मेरा
लिखूं रागनी मेहनतकश की, अग्रेज सिंह सै नाम मेरा
हम,घर का संकट और टोटे की, मार झेलरे दोहरी सैं

''पहले ख़ुद पढ़ूँगा और फिर दूसरों को पढ़ाऊँगा।
हम मज़दूरों को पढ़ना चाहिए !
हमें इस बात का पता लगाना चाहिए
और इसे इच्छी तरह
समझ लेना चाहिए कि
हमारी ज़िंदगी में
इतनी मुश्किलें क्यों हैं!''
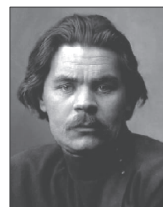
-पावेल
(मैक्सिम गोर्की के उपन्यास माँ का नायक)

डर

– जसवंत मोहाली
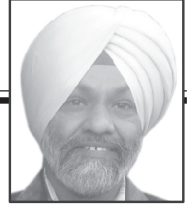
हमारे मस्तिष्क का एक हिस्सा जिसे अमिगडाला *(Amygadala)* कहा जाता है वह हमारी डर की भावनाओं को नियंत्रित करता है। निर्भयता भी एक ऐसी बीमारी है जिसमें रोगी अनावश्यक जोखिम उठाता है। बहुत डर की स्थिति में ये ही भाव रहता है कि ''यह जीना भी कोई जीना है।'' यही कारण है कि अमिगडाला जीवन के संतुलन के लिए इतना महत्वपूर्ण है। डरमय और डर रहित जीने की मानसिक स्थिति ही जीवन है। यह अमिगडाला ही है जो ''लड़ो या भागो'' प्रतिक्रिया को निर्धारित करता है।

विशेषज्ञों का मानना है कि डर पर काबू पाने का एकमात्र तरीका यह है कि जिन चीजों से आपको डर लगता है उन्हें बार–बार करें। हमारी अज्ञानता के कारण कुछ झूठे डर मन में जगह बना लेते हैं। जैसे अँधेरे में तार पर हिलता हुआ कपड़ा भी आपको डरा सकता है अन्धविश्वास का सबसे बड़ा कारण अज्ञानता से जन्मा भय ही होता है।

जब आप मानसिक तनाव के कारण डर के साए में जी रहे होते हैं तो इस दौरान लिए गए फैसले गलत भी हो सकते हैं। इसलिए कोई भी बड़ा फैसला लेने से पहले अपनी मानसिक स्थिति के बेहतर होने का इंतजार करें। आपको झूठे डर से बाहर निकालने के लिए किसी विद्वान की उक्ति बिल्कुल सही बैठती है ''कि आज वही कल है जिससे आप कल डरे हुए थे।''

डर की घटना को समझने के लिए आइए फिल्म चमकीला का संदर्भ ले सकते हैं। फिल्म में दिखाया है कि कथित गंदे गाने के कारण उसे धमकियां मिलने के बाद चमकीला डर जाता है और गंदे गानों की जगह धार्मिक गाने गाने का फैसला करता है। जब धार्मिक गीतों की एक रील आने वाली होती है तो फिर पुलिस उसे धमकी देती है कि उसके आतंकवादियों से संबंध हैं। वहीं लोग भी चाहते हैं कि वह पहले वाले गाने गाए। लंबे समय तक कशमकश में रहने के बाद वह डर के साए से बाहर आ जाता है और अपनी पसंद की जिंदगी जीने की सोचता है और इस पर अमल करने लगता है। भले ही इसकी कीमत उसे अपनी जान देकर चुकानी पड़ती है। यह फिल्म का विश्लेषण नहीं है, न ही चमकीला कोई लोक नायक है, यह उदाहरण सिर्फ समझने के लिए है कि जिंदगी आपको कड़ी टक्कर देती है, जिसका निष्कर्ष है कि ''बिना डरे जियो''।

पिछले दिनों सलमान रुश्दी की जीवनी पर आधारित पुस्तक ''नाइफ'' पढ़ी। सलमान रुश्दी ने कई साल पहले एक उपन्यास ''सैटन्स वर्सेज'' लिखा था, जिसके बाद ईरान के सर्वोच्च धार्मिक नेता खुमैनी ने उन्हें जान से मारने का फतवा जारी कर दिया था। इतने लंबे समय तक लंदन में पुलिस सुरक्षा में रहना उसे भारी पड़ने लगता है। साल 2000 में, वह अमेरिकी शहर न्यूयॉर्क चला जाता है लेकिन जब वह किसी होटल में खाना खाने जाते हैं तो उन्हें पहचानने वाला एक आदमी उनके पास आता है और पूछता है कि क्या आपको भी यहीं खाना है तो क्या हम चलें जाएं? जाहिर है कि रुश्दी के आसपास भी डर फैल गया था लोग भी उससे मिलने से कतराने लगे थे। कुछ समय तक डर और संघर्ष की जिंदगी जीने के बाद वह अब खुलेआम टी वी कार्यक्रमों और आम जिंदगी में शामिल होते दिख रहे हैं। अचानक से साल 2022 में एक युवक उन्हें चाकू मार देता है।

सरकारें आमतौर पर कमोबेश सत्तावादी होती हैं जो धीरे धीरे तानाशाही के रूप में बदल जाता है। तानाशाह बाहर से मजबूत दिखते हुए भी अंदर से अक्सर कायर होते हैं। वे विरोध की छोटी सी आवाज से भी डरते हैं। वे तुरंत प्रतिक्रिया दिखाते हैं । गोरख पांडे ने सरकार के डर का वर्णन कितने सुंदर शब्दों में किया है–

..वह डरते है,
किस चीज से डरते हैं वे
तमाम धन दौलत, गोला, बारूद,
पुलिस–सेना के बावजूद?
वे डरते हैं कि एक दिन
निहत्थे और गरीब लोग
उनसे डरना बंद कर देंगे।

हिन्दी रुपः गुरमीत अम्बाला

शिक्षा उसे कहते है जो सही को सही और गलत को गलत कहने की क्षमता को विकसित करती है।

– महात्मा जोतीराव फुले

रैशनेलिस्ट सोसायटी हरियाणा की ओर से

पांच लाख रूपए जीतने की चुनौती

रैशनेलिस्ट (तर्कशील) सोसायटी हरियाणा (रजि.) की ओर से घोषणा की जाती है कि सोसायटी भारतीय मुद्रा के पांच लाख रूपए पुरस्कार हेतु संसार के किसी भी ऐसे व्यक्ति को देने के लिए वचनबद्ध है जो धोखारहित अवस्थाओं में अपनी दिव्य/अलौकिक शक्ति का प्रदर्शन कर निम्नलिखित शर्तों में से किसी एक शर्त अथवा अधिक को पूरा कर सकता हो। यह पेशकश तर्कशील सोसायटी से किसी व्यक्ति द्वारा प्रथम पुरस्कार जीतने तक जारी रहेगी।

सभी देव पुरूष, बाबा, साधु, योगी, सिद्ध, गुरू, तांत्रिक, स्वामी, ज्योतिषी, मुल्ला-मौलवी, पादरी, भिक्षुक, मुनि एवं कोई भी ऐसा अन्य व्यक्ति जिसने आध्यात्मिक क्रिया-कलापों, प्रभु भक्ति अथवा वरदान से कोई दिव्य शक्ति प्राप्त की हो, इस पुरस्कार को निम्नलिखित चमत्कारों में से किसी एक का प्रदर्शन करके जीत सकता है।

जो अपनी दिव्य शक्ति द्वारा

1. सील बंद करंसी का क्रमांक पढ़ सकता हो। 2. करंसी नोट की ठीक नकल उसी समय पैदा कर सकता हो। 3. ऐसी वस्तु जिसकी मांग करें, हवा में से प्रकट कर सकता हो। 4. हवा में उड़ सकता हो। 5. शुद्ध जल की ऊपरी सतह पर चल सकता हो। 6. जलते हुए अंगारों पर नंगे पांव आधे मिन्ट तक खड़े रहकर भी न झुलसे। 7. किसी विशेष वस्तु को हिला या मोड़ सकता हो। (बिना कोई शारीरिक, यांत्रिक, प्राकृतिक बल लगाए) 8. टैलीपैथी द्वारा किसी दूसरे व्यक्ति के विचार पढ़ सके। 9. प्रार्थना, भक्ति, जल या पवित्र राख द्वारा मानव शरीर के कटे हुए अंग को एक इंच तक बढ़ा सके। 10. अपना शरीर एक स्थान पर छोड़ स्वयं दूसरे स्थान पर प्रकट हो सकता हो। 11. अपनी श्वास क्रिया को 30 मिनट तक रोक सकता हो। 12. जो आदमी को कुत्ते में या कुत्ते को किसी अन्य जानवर में बदल सके। 13. किसी ऐसे भूत-प्रेत या आत्मा को प्रकट कर सके, जिसका कैमरे द्वारा फोटो लिया जा सके। 14. ताला लगे कमरे में से बाहर आ सकता हो। 15. किसी वस्तु का भार बढा सकता हो। 16. पानी को शराब, पैट्रोल अथवा खून में परिवर्तित कर सकता हो। 17. छुपी हुई वस्तु को खोज सके। 18. मन्त्र-तंत्र अथवा टोने टोटके से सोसायटी के किसी विशेष सदस्य को निर्धारित समय में शारीरिक क्षति पहुँचा सके। 19. संगीत पैदा करने वाले किसी यंत्र बीन, बांसुरी, बाजा या ढोलक को बंद कर सकता हो। 20. पुर्नजन्म के आधार पर कोई विशेष भाषा बोल सकता हो। 21. घरों में होने वाली आग लगने की, ईट पत्थर गिरने की तथा अपने-आप कपड़े कटने की घटनाओं में किसी भूत अथवा दिव्य शक्ति का प्रमाण दे सके। 22. जो ज्योतिषी, पांडा व मुफ्त में हाथ देखने वाला व्यक्ति ज्योतिषी को विज्ञान बतलाकर लोगों को गुमराह करता हो, हमारे पुरस्कार को जीत सकता है। यदि वह 10 विभिन्न व्यक्तियों की जन्म कुंडलियों व 10 हस्त चित्रों को देखकर संबंधित पुरूषों तथा स्त्रियों की अलग-अगल संख्या, मृत और जीवित लोगों की संख्या या जन्म का ठीक समय व स्थान अक्षांस-रेखांश के साथ बता दे, इसमें 5 प्रतिशत गलती की छूट दी जाएगी।

इन उपरोक्त 22 चुनौतियों के अतिरिक्त कोई भी ऐसी चुनौती जिसे तर्कशील सोसायटी किसी विशेष समय व अवस्था में मंजूरी दे, वह भी पुरस्कार जीतने के लिए मान्य होगी।

उपरोक्त चुनौतियां निम्नलिखित शर्तों के साथ क्रियान्वित होंगी।

1. जो व्यक्ति सोसायटी की इस चुनौती को स्वीकार करेंगा, चाहे वह पुरस्कार लेने की इच्छा रखता हो अथवा न उसे सोसायटी के किसी मनोनीत किए हुए व्यक्ति के पास 5 हजार रूपये धरोहर राशि के रूप में जमा करवाने होंगे। यह राशि शर्त जीत लेने पर पुरस्कार की राशि के साथ लौटा दी जाएगी। यह धरोहर की राशि ऐसे लोगों को दूर भगाने के लिए है, जो सस्ती प्रसद्धि चाहते है, नहीं तो वे हमारे समय, धन व शक्ति को व्यर्थ में नष्ट करेंगे।
2. धरोहर राशि जमा करवाने के बाद संबधित व्यक्ति के चमत्कारों का पहले सोसायटी के विशिष्ट सदस्य किसी निश्चित समय पर प्रारंभिक परीक्षण लेंगे।
3. यदि चुनौती स्वीकार करने वाला व्यक्ति प्ररभिक परीक्षण में असफल रहता है तो उसकी धरोहर राशि जब्त कर ली जाएगी तथा उसे अंतिम परीक्षण में भाग लेने की मंजूरी नहीं दी जाएगी।
4. यदि वे प्ररभिक परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाता है तो अंतिम प्रदर्शन हमारे द्वारा लोगों की उपस्थिति में होगा।
5. यदि वह अंतिम प्रदर्शन जीत जीत जाता है तो उसे 5 लाख रूपए पुरस्कार तथा 5 हजार रूपया धरोहर राशि दे दिए जाएंगे।
6. सभी प्रदर्शन, धोखा न दिए जाने वाली अवस्थाओं में हमारी पूर्ण संतुष्टि तक किए जाएंगे।
7. भाषा संबंधी विवाद पर डा. अब्राहम थामस काव्वूर द्वारा 1968 में जारी अंग्रेजी भाषा की चुनौती ही मान्य होगी।

राज्य कार्याकारिणी
रेशनलिस्ट (तर्कशील) सोसायटी हरियाणा (रजि)

तर्कशील, लोकतांत्रिक एंव जन संगठनों के बढ़ते कदम:

विश्व प्रसिद्ध लेखिका अरुंधति राय और प्रोफेसर शेख शौकत हुसैन के खिलाफ यू.ए.पी.ए. के तहत केस दर्ज करने और तीन नए कानूनों के खिलाफ पंजाब के जन संगठनों द्वारा जलन्धर में आयोजित राज्यस्तरीय कन्वेंशन का अध्यक्षीय मंडल

देशभक्त यादगार हाल जलन्धर में आयोजित राज्यस्तरीय कन्वेंशन को सम्बोधित करते हुए प्रसिद्ध पत्रकार भाषा सिंह

कन्वेंशन के उपरांत नव घोषित कानूनों एंव यू. ए. पी. ए. के तरह दर्ज केसों के खिलाफ जन संगठनों द्वारा रोष प्रदर्शन

If undelivered please return to :

Tarksheel

Tarksheel Bhawan, Tarksheel Chowk,
Sanghera By Pass, BARNALA-148101
Post Box No. 55
Cell. 98769 53561, 98728 74620
Web : www.tarksheel.org
e-mail : tarkshiloffice@gmail.com

BOOK POST
(Printed Matter)

To ....

....

....